

विषय-सूची ।

विषय सूची

रङ्गीन चित्रों की सूची ।



एक सौ तेंतालीस अध्याय

कणिक की कुनीति

हैं—राजन्, वीर्यवान् पाण्डव असाधारण बलशाली और तेजस्वी हो ष्ट्र को बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने राजनीति-कुशल और मन्त्रियों में कान्त में कहा—द्विजश्रेष्ठ कणिक, पाण्डु के पुत्रों का नित्य अभ्युदय होता जा रहा है। इसी कारण उन पर मुझे ईर्ष्या हो रही है। तुम निश्चय करके कहो, उनसे मेल रखना चाहिए या झगड़ा करना चाहिए। मैं तुम्हारी सलाह के अनुसार ही काम करूँगा।

महाराज, धृतराष्ट्र के प्रश्न को सुनकर ब्राह्मण-श्रेष्ठ कणिक बहुत प्रसन्न हुए और फिर नीतिशास्त्र के अनुकूल तीक्ष्ण उपदेश देने लगे। उन्होंने कहा—राजन्, मैं आपके प्रश्न के उत्तर में जो कुछ कहता हूँ उसे मन लगाकर सुनिए। हे कुरुश्रेष्ठ, मेरे कठिन कर्त्तव्योपदेश को कीजिएगा। राजा को चाहिए कि वह नित्य दण्ड देने के लिए उद्यत और शत्रुओं को दबाने के लिए प्रकट रक्खे। अपने पर चोट करने और दूसरों पर चोट करने का मौक़ा सदा देखता रहे। जो राजा उद्यत रहकर कड़ा शासन करता है उससे लोग बहुत डरते हैं। इस सदा सब काम सिद्ध करने चाहिएँ। ऐसा रहे कि शत्रु तो उसके दोषों शत्रुओं के दोषों को देख ले। कछुए की तरह सहाय, साधन, उपाय छिपाये रहे और सदा यह देखता रहे कि शत्रु लोग उसके दोष देख, नि न पहुँचा सकें। किसी काम का आरम्भ करके उसे पूरा किये लिए ठीक नहीं। देखिए, अच्छी तरह निकालने में जो कसर रह भी ऐसा घाव कर देता है जो बहुत दिनों तक आराम नहीं होने पाता। को जान से मार डालना ही ठीक है। शत्रु यदि बड़ा पराक्रमी और , इस कारण वह तत्काल न मारा जा सकता हो, तो अब उस पर

कुछ आपत्ति आ पड़े तब आक्रमण करना चाहिए; [उसे स्थान से भगाने की चेष्टा में लगे रहना चाहिए। इस प्रकार या तो उसे मार डाले या देश से भगा दे।] इस विषय में धर्माधर्म का विशेष विचार करना ठीक नहीं। महाराज, दुर्बल शत्रु को भी तुच्छ न समझना चाहिए; क्योंकि आग की एक चिनगारी भी आश्रय पाकर सारे जङ्गल को जला सकती है। मौक़ा देखकर अन्धा और बहरा भी बन जाना चाहिए; अर्थात् शत्रुओं की की हुई अपनी बुराई देख-सुनकर भी टाल देना चाहिए। धनुष धारण करने के अभिमान को मौक़ा देखकर छोड़ देना चाहिए; अर्थात् काम निकालने के लिए क्षात्रधर्म छोड़कर शत्रु के यहाँ भिक्षुक और अनुचर बनकर भी रहने में कुछ दोष नहीं। जैसे मृग को पकड़ने के लिए बहेलिया आँखें मूँदकर लेट रहता है और मौक़ा पाकर पास आये हुए मृग को पकड़ लेता है या उसको तीर मारता है, वैसे ही शत्रु को विश्वास दिलाने के लिए—काम पड़े तो—उसके घर में भी सो रहे और मौक़ा पाकर वार कर दे। शत्रु को विश्वास दिलाकर—साम, दान आदि उपायों से—नष्ट करना ही राजा का कर्त्तव्य है। शरणागत शत्रु पर भी दया न करनी चाहिए। शत्रु के मरने से खटका जाता रहता है। मरा हुआ शत्रु कुछ हानि नहीं पहुँचा सकता। पहले के अपकारी शत्रु को भी, उसके कर्मचारियों को धन का लोभ देकर मिलाकर, उनके द्वारा मरवा डालना चाहिए। शत्रुपक्ष के तीन (ऐश्वर्य, मन्त्र, उत्साह), पाँच (मन्त्री, राज्य, दुर्ग, ख़ज़ाना, सेना) या सात (साम, दान, भेद, दण्ड, उद्बन्धन, विष, वह्नि) के द्वारा अङ्गों को सदा नष्ट करने का उद्योग करना चाहिए। पहले शत्रुपक्ष की जड़ को ही काटे। फिर उसके सहायकों और पक्ष लेनेवालों को नष्ट करे। आधार की जड़ कटने से उसके आश्रय में रहनेवाले सभी नष्ट हो जाते हैं। वृक्ष की जड़ काट देने पर उसकी डालियाँ कहीं हरी-भरी रह सकती हैं? राजन्, अपना हाल छिपाकर सदा शत्रुओं का हाल जानने की चेष्टा करते हुए उन पर चोट करने का मौक़ा देखते रहना चाहिए। शत्रुओं से सदा सावधान रहना ही सबसे पहला कर्त्तव्य है। अग्निहोत्र, यज्ञदीक्षा, गेरुए कपड़े, जटा और मृगछाला आदि के द्वारा शत्रुओं को विश्वास दिलाकर, भेड़िये की तरह, उन पर चोट करनी चाहिए। अपना काम सिद्ध करने के लिए उक्त प्रकार की धूर्तता ही सबसे अच्छा उपाय है। जैसे फूली-फली शाखा को झुकाकर लोग पके-पके फल तोड़ लेते हैं वैसे ही शत्रुओं को अपनी ओर मिला-कर, चुन-चुनकर, उनका नाश करना चाहिए। होशियार लोग काम निकालने के लिए मौक़ा देखते हुए शत्रु को कन्धे पर चढ़ाये रखते हैं। जब मौक़ा पाते हैं तब, पत्थर पर घड़े की तरह, उसे गिराकर चूर-चूर कर देते हैं। अपकार करनेवाले शत्रु को, उसके गिड़गिड़ाने पर भी, कभी न छोड़ना चाहिए। अपकारी पर कृपा न करके उसे मार डालना ही ठीक है। साम, दान, भेद, दण्ड, इन उपायों से जिस तरह हो सके—शत्रु को नष्ट कर दे

—हे द्विजश्रेष्ठ! साम, दान, भेद और दण्ड के द्वारा किस तरह शत्रु का
है ? विस्तार के साथ दृष्टान्त के द्वारा यह विषय मुझे समझाइए।
—महाराज, पूर्व समय में नीतिशास्त्र के सिद्धान्तों को जाननेवाला एक
। उसका वृत्तान्त मैं आपसे कहता हूँ, सुनिए। अपना मतलब निका-
ार के बाघ, मूसा, भेड़िया और न्यौला, ये चार मित्र थे। इन चारों
में रहता था। एक दिन पाँचों मित्रों ने वन में घूमते-घूमते एक बलवान्
। किन्तु एकाएक आक्रमण करके उसे मारने में असमर्थ होने के कारण
ने लगे। सियार ने कहा—सुनो जी बाघ, तुम इस हिरन को मारने
चुके हो। किन्तु यह बड़ी फुर्ती से भागनेवाला, चतुर और जवान है।
रहा है। मेरी सलाह यह है कि जब यह मृग सोता हो तब हमारा
ा मांस खा ले। फिर यह भाग न सकेगा। तब तुम जाकर सहज
इसके बाद हम सब मित्र आनन्द से इसका मांस खावेंगे।
सलाह सुनकर उसी तरह सब काम करना मित्रों ने स्वीकार कर लिया।
कर मृग के पैरों को खा लिया। फिर बाघ ने जाकर उसे मार डाला।



मृग का मुर्दा शरीर धरती पर पड़ा देखकर सियार ने सबसे कहा—तुम लोग पहले नहा आओ, फिर भोजन करना। तब तक मैं इस मृग के मृत शरीर की देखभाल करता रहूँगा।

बाघ आदि सब मित्र, सियार के कहने से, नदी में नहाने को गये। सियार वहीं ठहरकर चिन्ता करने लगा। महाबली बाघ सबसे पहले नहाकर लौट आया। सियार को चिन्ता से व्याकुल देखकर बाघ ने पूछा—सियार, तुम हम सबसे बढ़कर
समय क्यों सोच में पड़े हुए हो? अभी इस मृग का मांस खाकर
मनावेंगे। सियार ने कहा—वीरवर बाघ, मूसे ने अभी जो मुझसे कहा
ा हूँ, सुनो। उसने कहा है कि बाघ के बल को धिक्कार है। आज
है वे मेरे बाहुबल की बदौलत आज अपना पेट भरेंगे मित्र बाघ,

मूसे के ये अहङ्कार से भरे वचन जब से मैंने सुने हैं तब से इस मृग का मांस खाने की रुचि मुझे नहीं रही।

बाघ ने कहा—मित्र, मूसे की ये बातें सुनकर आज मुझे चेत हुआ। आज से मैं अपने बाहुबल से वनवासी जीवों का शिकार करके उनका मांस खाऊँगा। बस, बाघ तो चला गया, इसी बीच में मूसा लौटकर आया। उसे देखकर सियार ने कहा—मित्र मूसे, तुम्हारा कल्याण हो। मुझसे अभी न्यौला जो कह गया है वह मैं तुमसे कहता हूँ, सुनो। उसने कहा कि बाघ ने इस मृग को मारा है। उसके दाँतों का विष इस मृग के मांस में भिद गया है। इससे मैं यह मांस न खाऊँगा। मैं मूसे को खाकर अपना पेट भरना चाहता हूँ। तुम इस मेरी इच्छा का अनुमोदन करो। सियार की बात सुनकर डर के मारे मूसा बिल में घुस गया।

राजन्, इसके बाद भेड़िया नहाकर आया। उससे सियार ने कहा—बाघ तुम पर बहुत ख़फ़ा है। यहाँ ठहरना तुम्हारे लिए अच्छा नहीं। वह अपनी स्त्री को साथ लेकर अभी यहाँ आता ही होगा। जो अच्छा समझ पड़े, सो करो। मांसभोजी भेड़िया अपनी जाति के स्वभाव के अनुसार दबककर, दुम दबाकर, वहाँ से खिसक गया।

अब न्यौला आया। उसे देखकर सियार ने कहा—मैंने अपने बाहुबल से मृगराज बाघ, भेड़िये आदि को हराकर भगा दिया है। तुम भी मुझसे लड़कर मुझे हराकर मनमाना मांस खा सकते हो। न्यौले ने कहा—मृगराज बाघ, भेड़िया और बुद्धिमान् मूसा, ये सब वीर जब तुमसे हार गये तब मैं तुमसे लड़ना नहीं चाहता। बस, वह भी चला गया।

कणिक कहते हैं—कुरु-नन्दन, इस प्रकार बुद्धि के बल से बाघ, भेड़िये, मूसे और न्यौले को भगाकर सियार ने अकेले मज़े से मांस खाया। इस सियार की नीति से चलनेवाला राजा नित्य अधिकाधिक सुख भोगता है। इसी तरह कायर को डर दिखाकर, वीर को विनय से, लोभी को धन देकर और बराबरीवाले तथा नीच को तेज दिखाकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहिए। महाराज, साम-दान-भेद-दण्ड का यह दृष्टान्त मैं आपको सुना चुका। अब और कुछ नीति के सिद्धान्त कहता हूँ, सुनिए। अभ्युदय चाहनेवाले राजा को चाहिए कि पुत्र, मित्र, भाई, बाप और गुरु भी यदि शत्रुता करते हों या शत्रुपक्ष से मिले हों तो उन्हें मार ही डाले। झूठी सौगन्द खाकर, धन देकर, विष दिलाकर या मायाजाल फैलाकर, जिस तरह हो सके, शत्रु को मार डालना ही नीति है। उसे मौक़ा पाकर छोड़ देना या उसकी तरफ़ से लापरवाही रखना ठीक नहीं। परस्पर शत्रुता रखनेवाले दोनों पक्ष यदि सहाय, साधन, उपाय आदि में समान हों और यों लड़कर दोनों में से किसी के जीतने की सम्भावना न हो, तो दोनों में से जो मेरी कही हुई इस नीति को मानकर चलेगा वही बढ़कर दूसरे को दबा सकेगा

होकर विरुद्ध-मार्ग पर चलें तो नीति के अनुसार उनको भी दण्ड देना चाहिए। राजा को क्रोध की अवस्था में भी प्रसन्न रूप ही रहना चाहिए; वह हँस-हँसकर बातें करे; मन में क्रोध रहने पर भी डाँटे-डपटे नहीं, निन्दा न करे। अपना वार करते समय, उसके पहले, और बाद को भी प्रिय ही बोले। अपने वार से दूसरे का सर्वनाश होते देखकर आप अनजान-सा बनकर उससे सहानुभूति दिखावे, शोक करे और रोनी सूरत बना ले। शत्रु को बहुत समय तक सान्त्वना देकर, भलाई की बातें बताकर, अपनी धर्मनिष्ठा दिखाकर अपने ऊपर विश्वास दिलाना पहला काम है। उसके बाद जब शत्रु को नीति की राह से विचलित देखे तब, घात पाकर, उस पर अपना वार करे। नित्य धर्मनिष्ठा दिखानेवाला राजा यदि ऐसा कोई घोर अपराध कर भी डालता है तो उसका वह दोष, काले बादलों से पहाड़ की तरह, ढक जाता है। जिसको मार डालना हो उसके घर में रात को आग लगवा दे; ग़रीब, ठग, चोर, परलोक पर विश्वास न रखनेवाले नास्तिक आदि के द्वारा विष दिला दे। जिसे मारना हो उसका बड़ा आदर करे; अच्छी-अच्छी चीज़ें भेंट करे; उसे देखकर उठ खड़ा हो; आदर से आसन दे; उसके अङ्गों पर सिर झुकाकर बातचीत करे; अपने हृदय के तीक्ष्ण भाव को छिपाये रहे। बहुत ही विश्वास दिलाकर उस पर चोट करे। जिनसे खटका हो और जिनसे खटका न हो, दोनों से सदा सावधान रहे। क्योंकि जिससे कुछ खटका न हो उसकी चोट से मनुष्य समूल नष्ट हो जाता है—कुछ भी नहीं बच रहता। जो विश्वास के योग्य न हो उस पर कभी विश्वास न करे। और, जिस पर विश्वास भी करे तो अत्यन्त विश्वास न करे। क्योंकि ऐसे अति विश्वासवाले पुरुष से प्राप्त भय टाले नहीं टलता। उसकी चोट से नामनिशान तक नहीं बचता। अपने लोगों का और शत्रुओं का हाल जानने के लिए उत्तम चतुर जासूसों का रखना भी राजा का सबसे पहला काम है। उन जासूसों की पहले अच्छी तरह जाँच कर लेनी चाहिए। दूसरों के राज्य में पाखण्डी, तपस्वी आदि के वेष में घूमनेवाले जासूस को रखना चाहिए। बाग़, विहारभवन, देवमन्दिर, मदिरापान के लिए नियत घर, राह, तीर्थस्थान, सर्वसाधारण के लिए बने हुए चबूतरे, कुआँ, पहाड़, जङ्गल, भीड़ और नदी-तट—ये स्थान 'चार' के विचरने के लिए उत्तम हैं। हृदय को छुरे की धार के समान तेज़ रखकर भी मीठी और मुलायम बातें करता रहे। जिसका अनिष्ट करना हो उससे हँस-हँसकर बातें करे। अपनी भलाई के लिए हाथ जोड़कर, सौगन्द खाकर, विनय करके, पैरों पर सिर रखकर, आशा देकर शत्रु से काम निकालना चाहिए। फिर मौक़ा मिलने पर उसका सर्वनाश कर डाले। अच्छी तरह फूलकर भी फलहीन रहे अर्थात् प्रसन्न होकर भी कुछ दे नहीं। वृक्ष की तरह फलकर भी दुरारोह बना रहे अर्थात् सम्पत्तिशाली होकर भी ऐसा बना रहे कि कोई उस पर आक्रमण न कर सके कच्ची अवस्था में भी पका सा बना रहे अर्थात् निर्बल होने पर भी सबल ऐसा

अपने को दिखावे। कभी जीर्ण अर्थात् हताश न हो। धर्म, अर्थ और काम को त्रिवर्ग कहते हैं। त्रिवर्ग में हर एक की एक-एक पीड़ा और एक-एक फल है। फल इष्ट है; पीड़ा को अनिष्ट समझकर उससे बचना चाहिए। धर्मात्मा पुरुष का चित्त अर्थ (धन) और काम के द्वारा पीड़ित होता है, उससे उसके धर्म को पीड़ा पहुँचती है। इसी तरह अर्थलोभी का चित्त धर्म और काम के विचार से चञ्चल होता है और कामासक्त का चित्त धर्म और अर्थ के ख़याल से डाँवाँडोल होता है। एकाग्र, गर्वहीन, ईर्ष्यारहित, शान्त, शुद्धचित्त होकर, प्रयोजन पर दृष्टि रखकर, ब्राह्मणों के साथ सलाह करनी चाहिए। अच्छे या बुरे, किसी उपाय से दीनता दूर करके अपना उद्धार करना चाहिए। इस प्रकार श्रीलाभ करके समर्थ होने पर धर्म का आचरण करे। जो मनुष्य किसी पर सन्देह करना नहीं जानता उसकी भलाई नहीं होती। फिर कभी जो सन्देह करने का अवसर आ पड़ा और उससे उसके प्राण बच गये तो अपने अच्छे दिन देखता है। जिसकी बुद्धि शोक से भ्रष्ट हो जाय उसे बीते हुए नल, राम आदि के उदाहरण देकर समझाना चाहिए। जिसकी बुद्धि लोभ आदि के द्वारा बिगड़ गई हो उसे "आगे किसी समय तुम्हारा भला होगा" यों कहकर, आशा दिलाकर, सन्तुष्ट करना चाहिए। पण्डित पुरुष को वर्त्तमान में धन आदि के द्वारा सन्तुष्ट करना चाहिए। जो राजा शत्रु से सन्धि (मेल) करके कृतकार्य की तरह निश्चिन्त होकर सोता है वह मानों पेड़ की डाली के सिरे पर सोता है। नीचे गिरने पर उसे होश आता है। ईर्ष्याहीन होकर सदा सलाह को छिपाने का यत्न करता रहे। अपने जासूसों से दूसरों की ख़बर तो लेता रहे, किन्तु औरों के जासूसों से अपने हृदय के क्रोध-प्रसन्नता आदि भावों को छिपाये रहे। मछुए जैसे मछलियों के अङ्ग काटते हैं, वैसे शत्रुओं के मर्मस्थल को बिना काटे—दारुण कर्म बिना किये—राजा को विशाल सम्पत्ति नहीं मिलती। शत्रु की सेना जब थकी हुई हो, कमज़ोर पड़ गई हो, किसी संक्रामक रोग के फैलने से पीड़ित हो, खाने को अन्न और पीने को पानी न पा सकती हो, या किसी प्रकार का विश्वास दिलाने से धीमी पड़ गई हो—असावधान हो गई हो—तब उस पर धावा करके उसे नष्ट कर दे। अर्थ की कामना रखनेवाले दो पुरुष कभी परस्पर मित्र नहीं हो सकते। अर्थसम्पन्न पुरुषों में मित्रता का भाव नहीं रहता; इससे किसी की इच्छा पूरी न करे—अधूरी रक्खे ताकि वह उलझा रहे। शत्रु को वश अथवा नष्ट करने के लिए कोई उपाय उठा न रखना चाहिए। पूर्ण रूप से साम-दान-भेद-दण्ड आदि का प्रयोग करके अपने भले की चेष्टा करनी चाहिए। ऐश्वर्य की इच्छा रखनेवाले राजा को चाहिए कि ईर्ष्याहीन भाव से यत्नपूर्वक सहाय, साधन, उपाय आदि का संग्रह और समय पाकर विग्रह (युद्ध) करे। इस काम में बड़ा उत्साही और तत्पर रहे। राजा को ऐसा उपाय करना चाहिए कि शत्रु और मित्र भी उसके इरादे को न जान सकें। राजा जिस काम में हाथ डाले वह पूरा होने पर ही प्रकट होना चाहिए। जब तक आपत्ति

न आवे तब तक डरे हुए पुरुष की तरह उसके प्रतिकार की चेष्टा करता रहे किन्तु जब आपत्ति आ जाय तब निडर होकर उसका सामना करे। जिसके दैव प्रतिकूल है उस शत्रु पर जो दया दिखाकर उस समय उसे छोड़ देता है वह आप अपनी मौत बुलाता है। हर एक काम के कारणों को पहले से ही देखकर सोच लेना चाहिए; क्योंकि एकाएक कोई काम आ पड़ने पर बुद्धि को भ्रम हो जाता है। इस कारण उसी दम उस पर विचार करके उसे पूरा करने में कोई प्रयोजन की बात रह जाना बहुत सम्भव है। अभ्युदय की इच्छा रखनेवाले राजा को चाहिए कि देश-काल पर विचार करके उत्साह के साथ कर्त्तव्य-पालन का यत्न करे। दैव (पूर्वसञ्चित कर्म), धर्म, अर्थ और काम को भी देश-काल के अनुसार सफल और सम्पन्न करना चाहिए। देश और काल को देखकर काम करने से ही सफलता और कल्याण होता है। यह नीति का निश्चय और निचोड़ है। बालक या छोटे शत्रु की भी उपेक्षा न करनी चाहिए; क्योंकि ताड़ के वृक्ष की तरह वह शीघ्र ही अपनी जड़ जमा लेता है। वह जङ्गल में डाली हुई आग की चिनगारी के समान शीघ्र ही बहुत बड़ा बन जाता है। थोड़ी सी आग हवा के सहारे धीरे-धीरे बढ़कर बहुत बड़ा रूप धारण कर लेती है और तब वह बहुत बड़े-बड़े पदार्थों को भी पल भर में भस्म कर डालती है। ऐसे ही जो राजा सहाय, साधन आदि के द्वारा अपने को बढ़ाता रहता है वह बड़े से बड़े सबल शत्रु और उसके सहायकों को चौपट कर सकता है। शत्रु को कुछ देने की आशा भी दे तो बहुत दिनों का वादा करे। समय आने पर कोई न कोई अड़चन दिखाकर वादे को पूरा न करे। बाधा का कोई कारण बता दे। उस कारण का भी और कोई कारण बताकर टाल दे। पैना छुरा बाल काटता है। वह सब समय अपने ख़ाने में छिपा रहता है, समय पड़ने पर निकलकर अपना काम करता है। नीतिज्ञ राजा को भी छुरे की तरह तीक्ष्ण होकर शत्रुओं का नाश करना चाहिए। वह अपने उद्देश को किसी के आगे प्रकट न करे।

इसलिए हे कुरुकुल-तिलक, पाण्डवों और अन्य राजाओं के साथ इसी न्याय से व्यवहार करते हुए आप वही कीजिए जिसमें पीछे पछताना न पड़े। आपका इस समय सब प्रकार से अभ्युदय हो रहा है; आप प्रधान राजा समझे जाते हैं। आप पाण्डवों से अपनी और अपने ऐश्वर्य की रक्षा कीजिए। आपके भतीजे (पाण्डव) बड़े बली हैं। वही काम कीजिए जिसमें पीछे किसी विपत्ति का सामना न हो।

वैशम्पायन कहते हैं—राजन्, यों कहकर कणिक अपने घर को चले गये। उनकी बातें सुनकर धृतराष्ट्र को बड़ी चिन्ता हो गई।

जतुगृह-दाहपर्व

एक सौ चवालीस अध्याय

संक्षेप से जतुगृह-दाह का वर्णन। पाण्डवों की उन्नति देखकर दुर्योधन का सन्ताप और धृतराष्ट्र के आगे रोना

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज! अब शकुनि, दुर्योधन, कर्ण और दुःश ने मिलकर यह सलाह की कि कुन्ती और पाण्डवों को आग में जलाकर मार डा इसकी सूचना धृतराष्ट्र को भी दे दी। इशारों से हृदय के अभिप्राय को जाननेवाले, तत्त्वदर्शी, निष्पाप, पाण्डवों के हितचिन्तक विदुरजी आँखों के इशारे आदि देखकर दुष्ट दुर्योधन आदि के, ऊपर कहे गये, इरादे को जान गये। तब उन्होंने विचारा कि कुन्ती अपने पुत्रों को लेकर यहाँ से भाग जायँ; यही उनके लिए अच्छा होगा। विदुर ने गुप्त रूप से ऐसी एक मज़बूत नाव



बनवाई जो आँधी के वेग और लहरों के थपेड़ों को अच्छी तरह सह सकती थी बहुत भारी लोहे का लङ्गर रक्खा गया और एक पताका खड़ी की गई। नाव तैयार ने कुन्ती से कहा—कुन्ती, ये धृतराष्ट्र इस कुल की कीर्त्ति और वंश को नष्ट क हैं। इनकी बुद्धि उलटी हो गई है; इसी से ये सनातनधर्म को छोड़ने के लिए तै यह जलमार्ग में चलने लायक़, लहरों और आँधी के वेग को सह सकनेवाली न.. इसी पर अपने पुत्रों के साथ बैठकर, प्राण बचाने के लिए, तुम यहाँ से चल दो।

महाराज, विदुर के वचन सुनकर यशस्विनी कुन्ती बहुत व्यथित हुईं। लेकर वे उसी नाव पर बैठकर चल दीं। वह नाव गङ्गा के भीतर होकर चली। की आज्ञा के अनुसार पाण्डवों ने नाव को छोड़ दिया, और [दुर्योधन के दिये] लिये हुए वे निर्विघ्न रूप से वन में पहुँच गये। इधर एक निषाद की स्त्री अपने लिये हुए दैवयोग से उसी, कुन्तीसहित पाण्डवों को जलाने के लिए, [दुर्योधन ——— में आकर सोई थी। वह निर्दोष निषाद की स्त्री अपने पुत्रों के साथ जलकर मर गई। नराधम पापी पुरोचन भी उसी भवन में जल गया। इस प्र

सलाह के अनुसार अनुचरों-सहित धृतराष्ट्र के पुत्रों को धोखा देकर महात्मा पाण्डव और उनकी माता कुन्ती मृत्यु के मुँह से बच गईं। [दुर्योधन के जासूसों को भी पाण्डवों के बचकर निकल जाने का पता न लगा।]

वारणावत नगर के निवासी लाक्षाभवन को जला हुआ देखकर कुन्तीसहित पाण्डवों के लिए दुःख और शोक करने लगे। उन्होंने दूत के द्वारा धृतराष्ट्र के पास सब हाल कहला भेजा कि राजन्, तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो गया। तुमने पाण्डवों को आग में जलाकर मरवा डाला। तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई। अब पुत्र के साथ निष्कण्टक-राज्य करो।

पाण्डवों के जलने का हाल सुनकर पहले धृतराष्ट्र ने अपने पुत्रों के साथ उनके लिए बहुत शोक किया। फिर भीष्म, विदुर और अन्यान्य भाई-बन्धुओं के साथ कुन्ती और पाण्डवों के प्रेत-कृत्य किये।

जनमेजय ने कहा—ब्रह्मन्, मैं जतुगृह-दाह और पाण्डवों के छुटकारे का हाल विस्तार से सुनना चाहता हूँ। क्रूर कणिक के उपदेशानुसार धृतराष्ट्र के पुत्रों ने यह निन्दनीय क्रूर कर्म किया था। इसका पूरा वृत्तान्त कहिए। सुनने के लिए मुझे बड़ा कौतूहल है।

वैशम्पायन ने कहा—राजन्, जतुगृह-दाह और उससे पाण्डवों के बचने का वृत्तान्त मैं विस्तार के साथ कहता हूँ; सुनिए। भीमसेन को अत्यन्त बलवान् और अर्जुन को सम्पूर्ण अस्त्र-विद्या में निपुण हुआ देखकर दुष्टबुद्धि दुर्योधन को दिन-रात दुर्निवार चिन्ता पीड़ा पहुँचाने लगी। तब कर्ण और शकुनि पाण्डवों को मार डालने के लिए तरह-तरह के उपाय करने लगे। पाण्डव भी विपत्ति आते ही उसी घड़ी उसके प्रतिकार की चेष्टा करते थे किन्तु वे विदुर के उपदेश के अनुसार दुर्योधन आदि की करतूतों को प्रकट न करते थे।

हे भरतश्रेष्ठ, पाण्डवों में अनेक गुण देखकर नगरवासी लोग सब प्रकार की सभाओं में उनके गुणों का कीर्त्तन करने लगे। सभा-समाजों में और राहों चौराहों पर जमा होकर सब लोग "युधिष्ठिर महाराज पाण्डु के बड़े पुत्र हैं; इस कारण वही वास्तव में राजगद्दी के अधिकारी हैं" इस विषय पर आन्दोलन करने लगे। वे कहने लगे—प्रज्ञाचक्षु महाराज धृतराष्ट्र को, अन्धे होने के कारण, पहले राज्य नहीं मिला। इसी कारण वे अब किस तरह राजा हो सकते हैं? उनके सिवा शान्तनु-पुत्र सत्यप्रतिज्ञ महाव्रत भीष्म पहले ही राज्य का त्याग कर चुके हैं। वे अब उसे ग्रहण ही नहीं कर सकते। इस कारण आओ हम नवयुवक, युद्धकुशल, सत्यानुरागी, दयालु, वेदज्ञ, पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को अपना राजा बनाकर राज्यासन पर बिठा दें। वे धर्मात्मा हैं इस कारण भीष्म, धृतराष्ट्र और दुर्योधन आदि का यथोचित सेवा-सत्कार करते हुए उन्हें तरह-तरह की भोग की सामग्रियाँ देकर सन्तुष्ट रक्खेंगे

युधिष्ठिर के बारे में प्रजा की यह बातचीत सुनकर दुर्बुद्धि के दुःख हुआ। वह दुस्सह चिन्ता से मन ही मन जलने लगा। दुष्ट विचा के मारे प्रजा की ऐसी बातों को सुन न सकता था। ईर्ष्या से जलत एकान्त में धृतराष्ट्र के पास पहुँचा। वहाँ और किसी को न देखकर करके, युधिष्ठिर पर प्रजा के अनुराग से होनेवाले अपने दुःख का हाल कहने लगा—पिताजी, मैंने पुरवासियों को ऐसी बातचीत करते सुना है, जिससे मुझे अपने अमङ्गल की आशङ्का है। वे आपको और भीष्म को कुछ न मानकर पाण्डवों को ही अपना राजा बनाने की सलाह कर रहे हैं। भीष्मजी इस पर चाहे राज़ी भी हो जायँ; क्योंकि उन्हें स्वयं राज्यभोग की इच्छा नहीं है। पुरवासियों के इस विचार से हमीं को घोर कष्ट और चिन्ता हो रही है। महाराज, पाण्डु को केवल अपने गुणों से ही बाप-दादे का राज्य मिला था। वास्तव में वे राज्य के अधिकारी न थे। आप बड़े थे, इस कारण राज्य के अधिकारी थे। केवल अन्धे होने के कारण आप



यदि पाण्डु के पुत्र उनके उत्तराधिकारी होने के कारण राज्य पावेंगे पौत्र ही राज्य पाते रहेंगे। इस प्रकार पाण्डु का वंश यदि उत्तरोत्तर तो हम और हमारे पुत्र राजवंश से बाहर और प्रजा की अवज्ञा के पात्र आप ऐसी कोई चाल चलिए, जिसमें हमको पराये दिये अन्न से पल पड़े। राजन्, आप यदि पहले राज्य पाते तो हम भी राजा होते। लोक का खयाल न करते।

एक सौ पैंतालीस अध्याय

पाण्डवों को वारणावत नगर में भेज देने की सलाह

वैशम्पायन ने कहा—महाराज, प्रज्ञाचक्षु राजा धृतराष्ट्र पुत्र की ये बातें सुनकर और कणिक के पूर्वोक्त नीति के उपदेश को स्मरण करके सोच में पड़ गये। दुविधा में पड़कर वे कुछ भी निश्चय न कर सके। इसके बाद कर्ण, शकुनि और दुश्शासन से सलाह करके दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से कहा—आप किसी हिकमत से, देशनिकाले के तौर पर, पाण्डवों को यहाँ से निकालकर वारणावत नगर को भेज दीजिए। ऐसा हो जाने पर फिर हमें उनकी तरफ़ से कुछ भी खटका न रहेगा।

पुत्र के ये वचन सुनकर तनिक सोचकर धृतराष्ट्र ने कहा—देखो, पाण्डु नित्य धर्म के मार्ग पर चलनेवाले धर्मात्मा थे। वे बन्धु-बान्धवों से, ख़ासकर मुझसे, धर्म के अनुसार ही व्यवहार करते थे। भोजन, वस्त्र आदि किसी सामग्री का उन्हें लोभ न था। वे कुछ भी न जानते थे; मेरा ही दिया हुआ खाते और पहनते थे। वे नाममात्र को राजा थे। राज्य का सब काम मुझसे पूछकर करते थे। पाण्डु के पुत्र युधिष्ठिर भी उन्हीं के समान धर्मात्मा, गुणी, यशस्वी और नगरवासियों को प्यारे हैं। उनके चार भाई और सब प्रजा के लोग सहायक हैं। मैं युधिष्ठिर को बलपूर्वक उनके बाप-दादे के राज्य से कैसे निकाल बाहर कर सकता हूँ? पाण्डु अपने मन्त्री और सेना के लोगों को पालते और प्रसन्न रखते थे। मन्त्रियों और सैनिकों के लड़के-बाले भी अब तक उनसे पाये हुए धन और जीविका से पल रहे हैं। पाण्डु ने नगरवासी आदि जिन लोगों का सत्कार किया है वे इस समय युधिष्ठिर के साथ बुरा बर्ताव करते देखकर अवश्य ही हमारे विरोधी बन जायँगे। वे हमको और हमारे बान्धवों को मारने के लिए क्यों न तैयार हो जायँगे?

दुर्योधन ने कहा—पिताजी, आप जो कह रहे हैं सो ठीक है। अपने में यह कमी देखकर मैं सारी प्रजा को धन और मान देकर अपनी तरफ़ कर लूँगा। वे अवश्य ही हमारी सहायता करेंगे। इस समय मन्त्री मेरे ही कहे में हैं और ख़ज़ाना भी मेरे ही हाथ में है। इस कारण किसी सहज उपाय के द्वारा आप झटपट पाण्डवों को यहाँ से निकालकर वारणावत को भेज दीजिए। जब मैं राज्यासन पर बैठकर अपनी जड़ अच्छी तरह जमा लूँगा तब पुत्रों-सहित कुन्ती फिर यहाँ चली आवेंगी।

धृतराष्ट्र ने कहा—दुर्योधन, तुम जो कह रहे हो उस बारे में मैं भी मन ही मन सोचता रहता हूँ; किन्तु इसे दुष्ट विचार समझकर किसी के आगे प्रकट नहीं करता। भीष्म, द्रोण, कृप और विदुर आदि में से कोई भी यह सलाह न देगा कि पाण्डवों को हस्तिनापुर से निकाल दो पुत्र, कुरुवंश के लोगों की दृष्टि में हम लोग और पाण्डव, दोनों ही समान हैं

महात्मा धर्मात्मा कुरुवंशी लोग दोनों में से किसी को कम और किसी को अधिक समझकर किसी की बुराई न चाहेंगे। हम यदि पाण्डवों की बुराई करने को तैयार होंगे तो ये महात्मा कुरुवंशी और सारे संसार के लोग हमारे शत्रु बन जायँगे।

दुर्योधन ने कहा—आप क्यों डरते हैं? भीष्म हमको और पाण्डवों को एक सा प्यार करते हैं। वे इस झगड़े में उदासीन ही रहेंगे। द्रोण के पुत्र अश्वत्थामा मेरे दल में हैं। इस कारण जिधर पुत्र होगा उधर ही द्रोणाचार्य को भी रहना पड़ेगा। कृपाचार्य भी बहनोई द्रोणाचार्य और भानजे अश्वत्थामा को नहीं छोड़ सकते; इस कारण वे हमारे ही पक्ष में रहेंगे। विदुर हमसे पलते हैं परन्तु वे छिपकर पाण्डवों की भलाई सोचा करते हैं। लेकिन वे अकेले पाण्डवों का पक्ष लेकर हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। इसलिए आप बेखटके कुन्ती-सहित पाण्डवों को यहाँ से निकाल दीजिए। ऐसा कीजिए जिसमें वे अभी वारणावत नगर को चल दें। मुझे नींद नहीं आती, हृदय में घाव सा लगा हुआ है। यह काम करके आप मेरे शोक की आग को शीघ्र बुझाइए।

एक सौ छियालीस अध्याय

पाण्डवों की वारणावत जाने की इच्छा और उसके लिए धृतराष्ट्र की आज्ञा

वैशम्पायन ने कहा—महाराज, दुर्योधन अपने भाइयों की सहायता से धन देकर और सम्मान करके प्रजा को धीरे-धीरे अपने वश में करने का उद्योग करने लगा। धृतराष्ट्र की सलाह से कुछ चतुर मन्त्री पाण्डवों के आगे वारणावत नगर को अत्यन्त रमणीय बताकर उसकी प्रशंसा करने लगे कि वह स्थान बहुत ही सुहावना है। इन दिनों वहाँ पशुपति महोत्सव (मेला) होनेवाला है। वारणावत नगर यों ही रत्न-पूर्ण और पवित्र स्थान होने के कारण दर्शनीय है। फिर वहाँ देखने लायक बड़ा भारी मेला भी होनेवाला है। राजन्, उन मन्त्रियों के मुँह से वारणावत की ऐसी प्रशंसा सुनकर वहाँ जाने के लिए पाण्डवों का भी जी चाहा। जब धृतराष्ट्र को यह मालूम हुआ कि पाण्डव वहाँ जाना चाहते हैं तब उन्होंने पाण्डवों को पास बुलाकर कहा—पुत्रो, ये सब लोग मेरे आगे अक्सर कहा करते हैं कि वारणावत नगर बड़ा ही रमणीय स्थान है। वहाँ एक बड़ा भारी मेला भी हुआ करता है। यदि वह उत्सव देखने को तुम्हारा जी चाहता हो तो अपने अनुचर और परिवार के लोगों के साथ वहाँ जाकर देवताओं के समान कुछ दिन सैर कर आओ। उस मेले में तुम्हारे पास जो गुणी, गवैये, ब्राह्मण आदि आवें उन्हें खूब धन-रत्न देना। इस प्रकार देवताओं के समान तेजस्वी तुम पाँचों भाई कुछ दिन तक आनन्द करो फिर जब जी चाहे, हस्तिनापुर को लौट आना

वैशम्पायन कहते हैं कि राजा युधिष्ठिर धृतराष्ट्र के इरादे को जान गये। उन्होंने यह भी सोच लिया कि इस समय हमारा कोई सहायक नहीं है। युधिष्ठिर ने कहा—चाचाजी, आपकी आज्ञा पाकर हम वहाँ अवश्य जायँगे। इसके उपरान्त जाने के दिन भीष्म पितामह, बुद्धिमान् विदुर, द्रोणाचार्य, बाह्लीक, सोमदत्त, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, भूरिश्रवा आदि मान्य पुरुषों से और गान्धारी, ब्राह्मणों, तपस्वी पुरोहितों, पुरवासियों आदि से मिलकर दीन भाव से युधिष्ठिर ने कहा—हम महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा से अनुचरों के साथ श्रीसम्पन्न मनोहर वारणावत नगर को जाते हैं। आप लोग प्रसन्न चित्त से यह आशीर्वाद करें कि हम वहाँ दिन-दिन अपनी उन्नति कर सकें; किसी पापकर्म में हमारी प्रवृत्ति न हो।

महाराज, युधिष्ठिर के ये वचन सुनकर भीष्म आदि सब कौरव उन्हें प्रसन्न करने के लिए प्रसन्नतापूर्वक कहने लगे—रास्ते में सब प्राणी तुम्हारी रक्षा करें; तुम्हें किसी तरह कोई विपत्ति न हो।

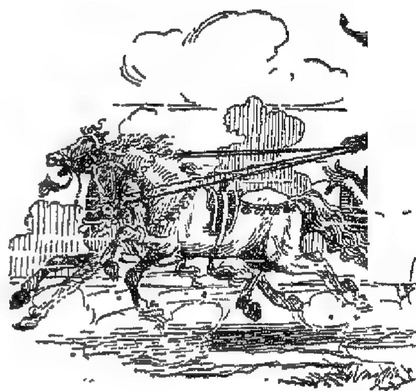
राज्यलाभ के लिए स्वस्त्ययनपाठ और अन्यान्य मङ्गल-कर्म समाप्त करके युधिष्ठिर आदि पाण्डव वारणावत जाने के लिए तैयार हो गये।

एक सौ सैंतालीस अध्याय

दुर्योधन का पुरोचन को लाक्षाभवन बनाने के लिए आज्ञा देकर भेजना

वैशम्पायन ने कहा—महाराज, राजा धृतराष्ट्र ने जब पाण्डवों को वारणावत जाने की आज्ञा दी तब दुष्ट दुर्योधन बहुत प्रसन्न हुआ। उसने पुरोचन नाम के मन्त्री को एकान्त में बुलाकर उसका दाहना हाथ पकड़कर कहा—पुरोचन, इस धन-धान्य-पूर्ण सारी पृथ्वी पर हमारा तुम्हारा दोनों का अधिकार है। तुमको वही उपाय सोचना और करना चाहिए जिसमें वह मेरी हो जाय। तुमसे बढ़कर विश्वासपात्र सहायक ही और कौन मेरा है, जिसके साथ मैं ऐसी सलाह कर सकूँगा! मित्र, तुम इस सलाह को गुप्त रखकर मेरे शत्रुओं को जड़-मूल से नष्ट कर दो। मैं जिस तरह कहता हूँ उस तरह होशियारी के साथ सब काम करो। पिता ने पाण्डवों को वारणावत जाने की आज्ञा दी है। उसी आज्ञा के अनुसार वे वहाँ जाकर उत्सव देखेंगे और कुछ दिन रहकर सैर करेंगे। तुम एक शीघ्रगामी खच्चरों के रथ पर बैठकर अभी वारणावत जाओ। वहाँ पहुँचकर नगर के किनारे पर, बहुत सा धन लगाकर, चार दालानोंवाला एक उत्तम भवन बनवाओ। पहले सन, सर्जरस और लकड़ी आदि आग को भड़कानेवाली सामग्री से वह भवन बनवाओ। फिर कुछ मिट्टी में घी, चर्बी, तेल और बहुत सी लाख मिलाकर ऊपर से ऐसा लेप करा दो कि कोई भाँप न सके सन, तेल, घी, लाख, लकड़ी आदि

सामग्री भी उस घर में जहाँ-तहाँ ख़ूब जमा कर रखना। किन्तु यह सब काम
होशियारी के साथ होना चाहिए कि पाण्डव या और कोई जाँचने पर भी उस
से आग में शीघ्र जलनेवाली सामग्री से बना हुआ न जान सके। इस तरह घ
ठहरो। जब माता कुन्ती-सहित पाण्डव वहाँ पहुँचें तब बड़े आदर के साथ उन
ठहराना। उस घर में उनके लिए बैठने को
उत्तम आसन, दिव्य सवारियाँ, पलँग आदि
सब आराम के सामान रखना; जिसमें मेरे
पिता सुनकर सन्तुष्ट हों। वारणावत नगर
के लोग और पाण्डव किसी तरह हमारे
विचार और कार्य का कुछ भी पता न पा
सकें। कुछ दिनों रहने से जब पाण्डवों को
विश्वास हो जाय और वे उस घर में बेखटके
सो रहे हों तब तुम द्वार पर आग लगा देना।



पाण्डवों-सहित कुन्ती उसी घर में जलकर भस्म हो जायँगी। इस तरह हमारा
जायगा और कोई हमारी निन्दा भी न करेगा। लोग समझेंगे, घर में अचा
से पाण्डव जल गये।

यह सब काम करने की प्रतिज्ञा करके पुरोचन खच्चरों के रथ पर सवार
पहले से ही वारणावत नगर को रवाना हो गया। महाराज, पुरोचन ने पहले से
धन की इच्छा के अनुसार सब काम कर रक्खा।

एक सौ अड़तालीस अध्याय

पाण्डवों की वारणावत-यात्रा। विदुर का गुप्त उपदेश

वैशम्पायन ने कहा—राजन्, हवा के समान वेग से चलनेवाले श्रेष्ठ घोड़े
उन रथों पर सवार होने से पहले पाण्डवों ने आर्त्त भाव से भीष्म, धृतराष्ट्र, महा
कृपाचार्य, विदुर और अन्य बड़े-बूढ़ों के चरणों में प्रणाम किया; जो लोग ह
उन्हें गले से लगाया। जो पाण्डवों से छोटे थे उन्होंने उन्हें प्रणाम किया।
माताओं की प्रदक्षिणा करके और आज्ञा लेकर पाण्डवों ने सब पुरवासियों से भी स
किया। इसके बाद वे वारणावत नगर को चल दिये। महाज्ञानी विदुर, कुछ
लोग और बहुत से पुरवासी शोकार्त होकर पाण्डवों के पीछे-पीछे चले पा

जा रहे कुछ निर्भय ब्राह्मण, पाण्डवों को बहुत ही दीन देख, दु:खित होकर कहने लगे—मन्दबुद्धि राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्रों का पक्षपात करते हुए पाण्डवों का बुरा चेतते हैं। धर्म-अधर्म का उन्हें कुछ भी विचार नहीं। निष्पाप युधिष्ठिर, महाबली भीमसेन, अर्जुन या माद्री के पुत्र महात्मा नकुल और सहदेव से धृतराष्ट्र का या उनके पुत्रों का कुछ भी अनिष्ट नहीं हो सकता। युधिष्ठिर के पिता राजा थे, इस कारण युधिष्ठिर राज्य के अधिकारी हैं। इसी से राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिर को और उनके भाइयों को नहीं देख सकते। पाण्डवों को राज्य से निकालकर दूसरी जगह भेज देना बड़ा ही अधर्म है। महात्मा भीष्म कैसे इस अधर्म को देख रहे और इसका अनुमोदन कर रहे हैं? उन्होंने क्यों नहीं इस अन्याय का प्रतिवाद किया? शान्तनु के पुत्र राजा विचित्रवीर्य पूर्व समय में पिता की तरह हमारा पालन कर गये हैं। उनके बाद राजर्षि पाण्डु ने भी उसी तरह प्रजापालन किया है। पुरुषसिंह पाण्डु स्वर्गवासी हो गये; इसी से इन बालक राजपुत्रों को धृतराष्ट्र नहीं देख सकते। हम लोग पाण्डवों को देश से निकालकर दूसरी जगह भेजना पसन्द नहीं करते। हम सब इस नगर को और अपने घरों को छोड़कर जहाँ युधिष्ठिर जायँगे वहीं रहेंगे।

राजन्, दु:खपीड़ित पुरवासियों के ये वचन सुनकर धर्मराज युधिष्ठिर को भी दु:ख हुआ। उन्होंने तनिक सोचकर कहा—राजा धृतराष्ट्र हमारे पिता, माननीय, गुरु, श्रेष्ठ और राजा हैं। किसी तरह की शङ्का न करके उनका कहा करना ही मेरा व्रत है। तुम लोग भी हमारे हित-चिन्तक मित्र हो। प्रदक्षिणा करके, आशीर्वाद देकर, प्रसन्नतापूर्वक तुम लोग अपने-अपने घर को लौट जाओ। जब हमारा कुछ काम होगा, सहायता की ज़रूरत होगी, तब तुम लोग हमारा प्रिय और हित करने का उद्योग करना।

युधिष्ठिर के यों कहने पर सब पुरवासी प्रदक्षिणा और प्रेम-सम्भाषण करके आशीर्वाद देते हुए नगर को लौट गये। उन लोगों के चले जाने पर धर्मज्ञ, बुद्धिमान् और प्रलाप-वचनों से वक्ता के आशय को समझ लेनेवाले विदुर ने म्लेच्छ भाषा में, बुद्धिमान् और प्रलाप वचनों से वक्ता के आशय को समझनेवाले, युधिष्ठिर से उपदेश के मिस यों कहना शुरू किया। युधिष्ठिर भी म्लेच्छ भाषा को अच्छी तरह बोल लेते और समझ सकते थे। विदुर ने कहा—जो मनुष्य शत्रुओं की, नीतिशास्त्र के अनुकूल, सलाह को समझ सकता है उसे चाहिए कि शत्रुओं के इरादे को जानकर आपत्ति से अपना उद्धार करने का उपाय करे। एक प्रकार का अस्त्र है, वह यद्यपि लोहे का बना हुआ नहीं है तो भी तीक्ष्ण है और शरीर को नष्ट कर सकता है। उसे जो जानता है उस घात जाननेवाले को शत्रु नहीं मार सकते। [अर्थात् तुम लोगों को जलाने के लिए एक आग्नेय भवन तुम्हारे शत्रुओं ने बनवाया है।] देखो, घास-फूस आदि को जलानेवाला और जाड़े को नष्ट करनेवाला अग्नि सारे जङ्गल को जला देता है, परन्तु बिलों के भीतर

रहनेवाले जीव उससे अपना बचाव कर लेते हैं। इस ढङ्ग से जो अपनी रक्षा करता है वही जीवित रहता है। [अर्थात् तुम सुरङ्ग से निकलकर अपनी रक्षा करना।] जिसके आँखें नहीं हैं वह राह नहीं पाता; उसे दिशाओं का भ्रम भी हो जाता है। जिसमें धैर्य नहीं है वह विभव को नहीं पाता। मेरे इस समझाने को तुम ख़ूब समझ लो। [अर्थात् तुम पहले से ही सब राहें देखकर दिशा आदि का ज्ञान प्राप्त कर लेना जिसमें रात को सुरङ्ग से निकलकर वन में भटकना न पड़े।] दुष्ट पुरुषों के दिये हुए, बिना लोहे के, शस्त्र को स्वयं स्वीकार कर लेना ही ठीक है। आप दोनों ओर राहवाले स्याही के भठ के समान स्थान की शरण लेकर, शत्रुओं को नष्ट करके, आग की आँच से बच जाना चाहिए। [अर्थात् पुरोचन के बनाये घर में तुम ख़ुशी से रहना। मौक़ा पाकर सुरङ्ग के द्वार से बाहर निकल जाना और पुरोचन को उसी में जलकर मर जाने देना। क्योंकि वह जीता रहेगा तो पीछा करने का खटका बना रहेगा।] घूमने से राहों का ज्ञान हो जाता है; नक्षत्रों से दिशाओं का पता लगा लिया जाता है। जो मनुष्य बुद्धि के द्वारा पाँचों इन्द्रियों को वश में रखता है वह पीड़ा से बच जाता है। शत्रु उसे कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकते।

पाण्डुपुत्र धर्मराज युधिष्ठिर ने यह सुनकर विद्वशिरोमणि विदुर से कहा—मैंने आपके उपदेश को अच्छी तरह समझ लिया।

पाण्डवों को इस तरह उपदेश देते हुए विदुर और भी कुछ दूर तक उनके साथ गये। अन्त को पाण्डवों की प्रदक्षिणा करके, प्रेम-सम्भाषण करके, आशीर्वाद देकर नगर को लौट गये।

भीष्म, विदुर और सब पुरवासी जब लौट गये तब कुन्ती ने युधिष्ठिर से कहा—सब बन्धु-बान्धवों के आगे विदुर ने जो कुछ धीरे-धीरे तुमसे कहा और तुमने उनसे कहा कि मैं सब समझ गया वह मेरी समझ में नहीं आया। यदि मुझसे कहने में कुछ हानि न हो, और मैं उसे समझ सकूँ, तो उस अपने और विदुर के संवाद का तात्पर्य कहो। मैं सुनना चाहती हूँ।

युधिष्ठिर ने कहा—विदुर ने मुझसे कहा है कि तुम घर (विष) और आग से बचे रहना। वहाँ की सब राहें देखकर जान लेना। [नक्षत्रों से दिशाओं की पहचान कर लेना।] जिस घर में रहना उसे अच्छी तरह जाँचकर देख लेना। जितेन्द्रिय पुरुष ही पृथ्वी का राज्य पा सकता है। इन्हीं सब बातों को समझकर मैंने उनसे कहा कि मैं सब समझ गया।

फागुन बदी अष्टमी को, रोहिणी नक्षत्र में, पाण्डव वारणावत के लिए रवाना हुए। वारणावत में पहुँचकर पाण्डवों ने नगरवासियों से भेंट की।

एक सौ उनचास अध्याय

पाण्डवों का जतुगृह में रहना

—महाराज, पाण्डवों के आने की खबर पाकर वारणावत नगर में बड़ा आनन्द हुआ। अनेकों नगरवासी लोग, शास्त्र की विधि के सब मङ्गल की चीज़ें और अनेक प्रकार की भेंटें लेकर तरह-तरह की सवारियों पर चढ़कर पाण्डवों से मिलने के लिए चले। उन्होंने पाण्डवों को चारों ओर से घेर लिया। जय-जयकार करते हुए वे आशीर्वाद देने लगे। देवतुल्य राजा युधिष्ठिर उन पुरवासियों के बीच में, देवमण्डली में स्थित इन्द्र के समान, शोभायमान हुए। पुण्यात्मा पाण्डवों ने पुरवासियों की पूजा स्वीकार करके उनका यथोचित सत्कार किया और फिर मनुष्यों से पूर्ण, सजे हुए, वारणावत नगर के भीतर प्रवेश किया। पुर में जाकर वे पहले वेदपाठ आदि अपने कर्मों में लगे हुए ब्राह्मणों के यहाँ गये। फिर क्रमशः नगर के अधिकारी, योद्धा लोगों



शूद्रों के यहाँ उपस्थित हुए। हे भरतश्रेष्ठ, इस प्रकार नगरवासियों के कार करके पुरोचन के साथ पाँचों पाण्डव अपने डेरे पर पहुँचे। वहाँ साथ उनको टिकाया—अच्छी-अच्छी खाने की चीज़ें, पीने के पदार्थ, देकर उन्हें सन्तुष्ट करने की चेष्टा की। मूल्यवान् कपड़े पहने हुए वे रहने लगे।

की सेवा करता था और पुरवासी लोग उनके पास आया-जाया करते बीतने पर पुरोचन ने पाण्डवों से उसी अमङ्गलरूप किन्तु मनोहर नाम-। पुरोचन के कहने से पुरुषसिंह पाण्डव, कैलास के ऊपर यक्षों गये

धर्मराज युधिष्ठिर ने उस घर को चारों ओर से देखकर भीमसेन
आग को भड़का देनेवाली सामग्री से बना हुआ है। घी और लाख
गन्ध से यह बात स्पष्ट मालूम पड़ रही है। घर बनाने की विद्या में निपुण और शत्रुओं के विश्वासपात्र कारीगरों ने सन, सर्जरस, सेंठे, घास, बाँस आदि को घी से तर करके उनसे यह घर बनाया है। दुर्योधन के आज्ञाकारी भृत्य पुरोचन ने सोचा है कि जब हम लोग विश्वास करके बेखटके होकर इस घर में रहने लगें तब आग लगाकर हमें जला दे। भाई, इस विपत्ति की बात को बुद्धिमान् विदुर पहले ही ताड़ गये थे। इसी से उन्होंने मुझसे सावधान रहने के लिए कहा था। चाचा विदुर हम पर बड़ा स्नेह रखते हैं और नित्य हमारा हित



ही चाहते हैं। दुर्योधन के वशवर्त्ती दुष्ट पुरुषों ने गुप्त रूप से यह वि
बड़ी होशियारी और कारीगरी के साथ बनवाया है।

भीमसेन ने कहा—यदि आपको निश्चय हो गया है कि यह घर
वाली चीज़ों से बना है, तो फिर यहाँ रहने और ठहरने की क्या ज़रूर
ठहरे थे वहीं चलना चाहिए।

युधिष्ठिर ने कहा—मैं चाहता हूँ कि हम लोग सावधानी के स
हमारे चेहरे-मोहरे और रङ्ग-ढङ्ग से आशङ्का या सन्देह न प्रकट हो।
से बचकर निकल जाने की राह खोज निकालनी चाहिए। हमारे आ
भी सन्देह का चिह्न प्रकट हुआ और पुरोचन को यह हाल मालूम हो
इस मकान में आग लगा देगा। वह बलपूर्वक भी हमको इस घर में ज
दुर्योधन के अधीन मन्दमति पुरोचन न तो लोकनिन्दा से डरता है और न
है। हम यदि यहाँ जल गये तो हमारे पितामह भीष्म ही क्यों कौ
अथवा कौरवों को ही कुछ कहकर कुपित क्यों करेंगे? या धर्म का ध्या

अन्य कुरुवंशी लोग दुष्ट दग़ाबाज़ों पर क्रोध भी करेंगे तो वह व्यर्थ होगा। हम यदि आग के भय से डरकर इस जगह से भागना चाहेंगे तो राज्य का लोभी दुर्योधन अपने जासूसों से पता लगाकर, पीछा कराकर, हमको मरवा डालेगा। वह दुष्ट इस समय पद पर स्थित है, उसके अनेक सहायक हैं, उसके पास ख़ज़ाना भी है; और हम अ-पदस्थ, सहायहीन और निर्धन हैं। वह अनेक उपायों से हमें नष्ट कर सकता है। इसलिए पापी पुरोचन और दुर्योधन को धोखा देकर हमें भिन्न-भिन्न स्थानों में गुप्त रूप से रहना और सदा शिकार करते फिरना चाहिए। ऐसा करने से हमें सब राहें मालूम हो जायँगी और हम सहज में भाग सकेंगे। हम अभी कुछ ही दिनों में, ज़मीन के भीतर-भीतर, एक सुरक्षित गुप्त सुरङ्ग खोदेंगे। उसके भीतर जाने पर हम आग में जल न सकेंगे। ऐसा उपाय करना चाहिए कि हम यहाँ से भागकर बच जायँ और हमारे बचकर निकल जाने का हाल न तो पुरोचन को मालूम हो और न पुरवासियों को ही कानोकान ख़बर हो।

एक सौ पचास अध्याय

सुरङ्ग का खोदा जाना

वैशम्पायन कहते हैं कि राजन्, विदुर का विश्वासी मित्र, चतुर, एक सुरङ्ग खोदनेवाला था। उसने एकान्त में पाण्डवों के पास आकर कहा—मैं बहुत ही होशियार खुदाई का काम करनेवाला कारीगर हूँ। विदुर ने मुझे आपके पास भेजा है और कहा है कि तुम जाकर पाण्डवों का प्रिय और उपकार करो। इसलिए आप आज्ञा कीजिए, मुझे क्या करना होगा? मुझ पर आप लोग विश्वास करें; मैं आपको निशानी के तौर पर बताता हूँ कि यात्रा के समय विदुर ने म्लेच्छ भाषा में गुप्त रूप से आपको कुछ उपदेश किया था और आपने भी कहा था कि मैं समझ गया। यह जो कृष्णपक्ष की चौदस आवेगी उसी दिन, रात के समय, पुरोचन इस घर के द्वार पर आग लगावेगा। दुर्बुद्धि दुर्योधन कुन्तीसहित आप लोगों को जला देने का विचार कर चुका है।

कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर ने यह सुनकर उससे कहा—सौम्य, मुझे निश्चय हो गया कि तुम किसी दुष्ट विचार से नहीं आये हो। तुम विदुर के मित्र, भक्त और अनुगत हो। तुम उन्हें बहुत प्यारे हो। होशियार आदमी से किसी का कोई प्रयोजन छिपा नहीं रहता। तुम विदुर को जिस दृष्टि से देखते हो उसी दृष्टि से हमको भी देखो। हम विदुर को जैसा हित-चिन्तक समझते हैं वैसा ही तुमको जानते हैं। हम तुम्हारे ही हैं। तुम उन्हीं की तरह हमारी रक्षा करो मैं जानता हूँ, पुरोचन ने दुर्योधन की आज्ञा से हमें जलाने के लिए यह

आग्नेय भवन बनवाया है। पापी दुर्योधन के पास इस समय ख़ज़ाना है; उसके सहायक भी बहुत हैं। वह लगातार हमारा अनिष्ट करने की धुन में लगा रहता है। इस कारण तुम कोई यत्न करके इस आग के डर से हमको बचाओ। हम लोग यदि आग में जल जायँ तो दुर्योधन का मनोरथ पूरा हो जाय। उस दुरात्मा ने यह घर ऐसा बनवाया है कि इससे निकलना सहज काम नहीं है। इसके चारों ओर ऊँची दीवारें हैं और एक ही द्वार है। दुर्योधन के इस कुविचार को अवश्य ही पहले से विदुर जान गये थे। इसी से उन्होंने मुझे सावधान कर दिया था। विदुर को जिस विपत्ति की शङ्का थी वह इस समय हमारे सिर पर आ गई है। पुरोचन को ख़बर न हो, और तुम इस आपत्ति से हमें बचा लो।

वह खोदने की विद्या जाननेवाला कारीगर युधिष्ठिर की प्रार्थना स्वीकार करके, मोरी साफ़ करने के बहाने, एक बड़ी भारी सुरङ्ग खोदने लगा। उसका मुँह धरती की सतह के बराबर और कम चौड़ा बनाया और उसे किवाड़े लगाकर ढक दिया। पुरोचन के डर से ही उसने उस सुरङ्ग का द्वार इस तरह बन्द करके छिपा दिया। दुष्टबुद्धि पुरोचन हर घड़ी उस घर के द्वार पर बैठा रहता था। रात को सब हथियार बाँधे पाण्डव उसी घर में सोते और दिन को वन में शिकार खेलते फिरते थे। पाण्डवों का रङ्ग-ढङ्ग और आकार देखकर किसी को यह शङ्का नहीं हो सकती थी कि उन्हें दुर्योधन का यह बुरा विचार मालूम हो गया है। अ-विश्वस्त और अ-सन्तुष्ट पाण्डव अपने को विश्वस्त और सन्तुष्ट सा दिखाकर पुरोचन को धोखा दे रहे थे। विदुर के सलाहकार उस सुरङ्ग खोदनेवाले के सिवा कोई नगर-निवासी भी पाण्डवों के हृदय के भाव को नहीं जान सका।

एक सौ इक्यावन अध्याय

जतुगृह-दाह और माता को लेकर पाण्डवों का वहाँ से निकल भागना

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, पाण्डवों को वहाँ इस तरह रहते जब एक साल बीत गया तब पुरोचन ने समझ लिया कि अब पाण्डवों को पक्का विश्वास हो गया है; उनके मन मे किसी प्रकार की शङ्का या अ-विश्वास नहीं है। इससे उस दुष्ट को बड़ा आनन्द हुआ। धर्मात्मा नीति-निपुण युधिष्ठिर ने, यह समझकर कि पुरोचन को हमारे विश्वास का भरोसा हो गया है, अपने भाई भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव से कहा—दुष्ट पुरोचन को निश्चय हो गया है कि हम लोग उसके ऊपर विश्वास करके इस घर में रहते हैं। इस पापी को धोखा देने का काम अच्छी तरह हो गया। अब यहाँ से भाग निकलने का यही ठीक समय है। हम इस घर में छः मनुष्यों को, अपनी जगह पर जलने के लिए, छोड़कर इस घर ( ) में



भीमसेन का लाक्षागृह में आग लगाना।

आग लगा देंगे। इसी में पुरोचन को भी जला देंगे और सुरङ्ग की राह से भाग चलेंगे। किसी को हमारा पता न लगेगा।

महाराज, एक दिन कुन्ती ने दान-पुण्य के बहाने ब्राह्मण-भोजन का उत्सव किया। उस दिन नगर की बहुत सी स्त्रियाँ रात को वहाँ आईं। वे खा-पीकर कुन्ती से आज्ञा लेकर अपने-अपने घर चली गईं। दैवयोग से एक मल्लाह की औरत, अपने पाँच बेटों को साथ लिये, उस उत्सव में भोजन माँगने आई थी। उसने और उसके बेटों ने ख़ूब छककर भोजन किया। रात को अपने बेटों के साथ वह उसी घर में सो रही। वह और उसके बेटे शराब के नशे में चूर थे।

रात धीरे-धीरे बढ़ने लगी। हवा भी ज़ोर से चलने लगी। तब भीमसेन ने पहले घर के उस हिस्से में आग लगाई जिसमें पुरोचन रहता था। फिर लाक्षाभवन के द्वार में और उसके बाद घर के चारों ओर आग लगा दी। बात की बात में वह आग बड़े वेग से चारों ओर फैलकर भयानक हो उठी। तब पाँचों पाण्डव माता के साथ उस सुरङ्ग के भीतर घुस गये। जलकर बढ़ रही आग की असह्य गर्मी और उत्कट उजेला चारों ओर फैल गया। आग में जलकर फट रहे बाँस आदि का विकट शब्द दूर तक सुनाई पड़ने लगा। सब पुरवासी एकदम जाग पड़े। उस जलते हुए घर की भयानक दशा देखकर सब लोग दुःख प्रकट करते हुए कहने लगे कि दुर्योधन की आज्ञा से पापी पुरोचन ने यह ऐसा घर बनवाया होगा। इसमें सन्देह नहीं कि पाण्डवों को जलाने के लिए उसी ने इसमें आग लगाई है। अहो, राजा धृतराष्ट्र की इस विषम बुद्धि को धिक्कार है। इससे बढ़कर कुबुद्धि और क्या हो सकती है कि उन्होंने सीधे और सच्चे पाण्डवों को शत्रु की तरह जलवाकर मार डाला! सन्तोष की बात है कि बेदर्दी के साथ विश्वासी निरपराध नरश्रेष्ठ पाण्डवों की हत्या करनेवाला पुरोचन भी अपने कर्म का फल पा गया—इसी आग में जलकर मर गया।

महाराज, वारणावत के रहनेवाले लोग इस तरह रोते-कलपते हुए रात भर चारों ओर से उस घर को घेरे रहे।

इधर शत्रुनाशन पाण्डव अपनी माता को साथ लिये हुए उस सुरङ्ग से बाहर वन में जा निकले। सबने वहाँ से जल्दी भाग चलना ही ठीक समझा किन्तु कुछ नींद के मारे और कुछ डर के मारे कोई भी जल्दी न चल सका। दूसरे माता भी साथ थीं। इस कारण फ़ुर्ती से चलना असम्भव हो रहा था। तब महाबली भीमसेन ने कुन्ती को कन्धे पर चढ़ाया, नकुल और सहदेव को गोद में लिया और युधिष्ठिर तथा अर्जुन को दोनों बाहुओं पर बिठाया। इस प्रकार छाती की ठोकर से आगे के पेड़ों को गिराते और पैरों के वेग से पृथ्वी को कँपाते हुए तेजस्वी भीमसेन वायु-तुल्य वेग से आगे बढ़े।

एक सौ बावन अध्याय

विदुर के भेजे मल्लाह की सहायता से पाण्डवों का गङ्गा-पार होना

वैशम्पायन ने कहा—इसी समय चतुर विदुर का भेजा हुआ एक विश्वासी पुरुष उस वन में पहुँचा। उसे विदुर ने पाण्डवों को विश्वास दिलाने के लिए कुछ सङ्केत बता दिया था। उस पुरुष ने विदुर के बताये पते पर पहुँचकर वन में पाण्डवों को देखा। असाधारण बुद्धिमान् विदुर को चर (जासूस) के द्वारा दुर्योधन के दुर्विचार का हाल पहले ही मालूम हो गया था। इसी से पाण्डवों को राह बताने के लिए उन्होंने इस आदमी को भेज दिया। एक विश्वस्त कारीगर की बनाई, हवा और लहरों के वेग को सह सकनेवाली, लङ्गरदार, पताका से शोभित, मन और हवा के समान वेग से जानेवाली दृढ़ नाव गङ्गा के किनारे बँधी हुई थी। उस मनुष्य ने पाण्डवों को वहाँ पर ले जाकर वह नाव दिखाई और कहा—राजकुमार युधिष्ठिर, आपको विश्वास दिलाने के लिए विदुर ने जो सङ्केत के वाक्य कहे हैं सो मैं कहता हूँ। उन्होंने कहा है, "घास-फूस आदि को जलानेवाला शिशिर-शोषक अग्नि भारी जङ्गल में बिल के भीतर रहनेवाले प्राणियों को नहीं जला सकता। यह समझकर इसी ढँग से जो कोई अपनी रक्षा करता है वह जीवित रहता है।" हे पाण्डु-नन्दन, मैं विदुर का विश्वासपात्र सेवक हूँ। मैं कर्त्तव्य को बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। ये सङ्केत के वचन कहकर उन्होंने मुझे आपके पास भेजा है। दूरदर्शी, विज्ञ-शिरोमणि विदुर ने यह भी कहा है कि आप युद्धभूमि में कर्ण, शकुनि, दुर्योधन और उसके भाइयों को ज़रूर हरावेंगे। जलमार्ग से जाने के लिए यह उत्तम नाव तैयार है। आप लोग इस पर चढ़कर अवश्य इस विपत्ति से छुटकारा पा जायँगे।

उस पुरुष ने बहुत ही दुःखित कुन्तीसहित पाण्डवों को उस नाव पर चढ़ाकर फिर कहा—विदुर ने आपको प्यार करके कहा है कि तुम लोग निर्विघ्न चले जाना; राह में घबराना नहीं। महाराज, विदुर के भेजे हुए उस पुरुष ने नाव के द्वारा पाण्डवों को गङ्गा-पार पहुँचा दिया। किनारे पर उतरकर आशीर्वाद देकर जयजयकार करता हुआ वह पुरुष चला गया। पाण्डवों ने उसी पुरुष के द्वारा विदुर के पास अपने कुशल का समाचार भेज दिया। गङ्गा के उस पार पहुँचकर माता को साथ लिये हुए पाण्डव गुप्त रूप से फुर्ती के साथ जङ्गली राह से जान लेकर भागे।

एक सौ तिरपन अध्याय

वारणावत-निवासियों का विषाद। हस्तिनापुर में ख़बर भेजना।
धृतराष्ट्र का पाण्डवों का अन्तकर्म कराना

म्पायन कहते हैं—राजन्, इधर रात बीतने पर सब नगर के लोग पाण्डवों को देखने जल रहे लाक्षाभवन के पास पहुँचे। आग बुझाते-बुझाते नगरवासियों ने देखा व का बना हुआ घर समूचा जल गया है और उसी में पुरोचन भी जला हुआ पड़ा लोग ऊँचे स्वर से चिल्लाकर खेद प्रकट करते हुए कहने लगे—इसमें सन्देह नहीं कि ने पाण्डवों के नाश के लिए ही यह भवन बनवाया था। दुर्योधन के इस काम राष्ट्र को अवश्य ही रहा होगा। धृतराष्ट्र भी पाण्डवों से जलते थे; नहीं तो वे अपने ा न करते! भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, विदुर और अन्य कौरवों ने भी ड़ दिया है। आओ, हम लोग धृतराष्ट्र के पास यह कहला भेजें कि तुम्हारा मनो- गया; तुम्हारी करतूत से पाण्डव जलकर मर गये!

कहते हुए सब नगरवासी आग को हटाकर पाण्डवों का पता लगाने लगे। पाँचों थ जली हुई वही मल्लाह की स्त्री उन्हें देख पड़ी। उसे देखकर सबको निश्चय हो गया कि पाँचों पाण्डव और कुन्ती जल गईं। इसी समय विदुर के भेजे हुए उसी सुरङ्ग खोदनेवाले आदमी ने घर साफ़ करते-करते राख से वह सुरङ्ग पाट दी और उसके इस काम को कोई नहीं लख सका।



अब पुरवासियों ने दूत के मुँह से धृतराष्ट्र के पास कहला भेजा कि पुरोचन, कुन्ती और पाँचों पाण्डव उस घर में जलकर मर गये। यह अशुभ समाचार सुनकर धृतराष्ट्र ने ऊपर से बड़ा दुःख प्रकट किया। वे विलाप करते हुए कहने लगे—हाय, पाँचों व अपनी माता के साथ जलकर मर गये! आज मुझे भाई पाण्डु के मरने से दुःख हुआ! कौरव लोग तुरन्त वारणावत में जाकर उन वीरों का और कुन्ती तरह अन्त्येष्टि कर्म करें। हमारे कुलाचार के अनुसार सब पुण्य कर्म किये रोचन आदि और जो लोग वहाँ जलकर मरे हैं उनके बन्धु बान्धव आकर उनका

भी क्रिया-कर्म करें। खूब धन लगाकर सब कर्म इस ढँग से किया जाय जिसमें कुन्ती और वीर पाण्डव सद्गति को प्राप्त हों।

अब जातिवालों के साथ धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को और कुन्ती को तिलाञ्जलि दी। सब कौरव एकत्र होकर हाय कुरुवंश-वर्द्धन युधिष्ठिर! हाय भीम! हाय अर्जुन! हाय नकुल और सहदेव! हाय कुन्ती! कहकर विलाप करने लगे। उन्होंने भी मातासहित पाण्डवों को तिलोदक दिया। पुरवासी जन भी पाण्डवों की इस अकालमृत्यु के लिए गहरा शोक प्रकट करने लगे। विदुर ने थोड़ा ही शोक प्रकट किया; क्योंकि वे सब गुप्त वृत्तान्त जानते थे।

इधर बलवान् पाण्डव लोग माता के साथ वारणावत से निकलकर गङ्गा के किनारे पहुँचे। फिर मल्लाहों के बाहुबल, प्रवाह के वेग और अनुकूल वायु की सहायता से वे शीघ्र ही उस पार पहुँच गये। नाव से उतरकर, रात को नक्षत्रों से दिशा का पता लगाकर, वे दक्षिण दिशा को जाने लगे। महाराज, वे बड़ी चेष्टा से चलते-चलते एक घने जङ्गल के पास पहुँचे। उस समय नींद के मारे सबकी आँखें बन्द हुई जा रही थीं; सब भाई थके हुए और प्यासे थे। तब युधिष्ठिर ने पराक्रमी भीमसेन से कहा—हम अब इस घने जङ्गल में आ पहुँचे हैं। भाई, अब बड़े कष्ट का सामना है। अब मैं दिशा का पता चलाने में असमर्थ हूँ। इसी से आगे बढ़ने का साहस भी नहीं होता। नहीं मालूम, पापी पुरोचन जल गया या नहीं। यदि वह जल गया होगा तो भी हमें तो सबसे छिपकर जाना है। हम लोग यों शीघ्र चलकर अपनी रक्षा करने में इस समय असमर्थ हो रहे हैं। भाई, हम लोगों में तुम्हीं सबसे बली और वायु के समान तेज़ चलनेवाले हो। इसलिए अब तुम फिर उसी तरह हम सबको लादकर तेज़ी के साथ चलो।

युधिष्ठिर की यह आज्ञा पाकर भीम फिर उसी तरह माता कुन्ती और चारों भाइयों को लादकर वेग के साथ चलने लगे।

एक सौ चौवन अध्याय

पाण्डवों को और माता को जङ्गल में रखकर भीम का जल लाना, उनकी दुर्दशा देखकर रोना और जागते रहना

वैशम्पायन ने कहा—महाराज, वेग के साथ चल रहे भीमसेन की जाँघों के ज़ोर से वृक्षों और उनकी शाखाओं-सहित वह वन काँपने सा लगा। महाबली भीम की जाँघों से



समान हवा निकलने लगी। भीमसेन के वेग से सामने के वृक्ष और
वह मार्ग बराबर होता चला जाता था। आसपास के फले-फूले
र झाड़-झंखाड़ों को तोड़ते और कुचलते हुए वे चले जा रहे थे।
ह्यदेश इन तीन अङ्गों से जिसके मद-जल बह रहा हो उस क्रुद्ध, मदमत्त,
के समान बड़े-बड़े पेड़ों को तोड़ते हुए भीमसेन अपनी धुन में चल
ड़ और पवन के समान वेग से पाण्डव बेहोश से हो गये। अपनी
रा भीमसेन ने अपने भाइयों को और कुन्ती को बहुदूरव्यापी समुद्र-
या। ऊँचे-नीचे स्थानों में अपनी पीठ पर सुकुमारी यशस्विनी माता
सेन बड़ी सावधानी के साथ चलते थे। इस प्रकार बड़े कष्ट से अनेक
जन के डर से पाण्डव अपने को छिपाये हुए ही चलने लगे। चलते-
स समय माता और भाइयों को लादे हुए भीमसेन हिंसाप्रिय पशु-
ाक वन में पहुँचे। उस वन में फल-मूल या जल कहीं पर नहीं देख



पड़ता था। धीरे-धीरे सन्ध्या का घना अँधेरा और भी गहरा हो आया। वन के सब पशु-पक्षी भयानक शब्द करने लगे। सब दिशाओं को अन्धकार ने ढक लिया। उत्पातरूप बे-मौसम की आँधी बड़े वेग से चल रही थी। उस आँधी में सूखे पत्ते, सूखे फल इधर-उधर उड़ते फिरते थे। छोटे वृक्ष और लताएँ उखड़-उखड़कर गिर पड़ती थीं। बड़े-बड़े वृक्ष झुक-झुक जाते थे और उनकी टहनियाँ बड़े शब्द के साथ टूट-टूटकर गिर रही थीं।

उस समय नींद, थकन और प्यास के मारे पाण्डवों का बुरा हाल हो रहा था। वे आगे चलने में बिलकुल असमर्थ हो रहे थे। पाँचों पाण्डव उस निरानन्द निर्जन वन में एक
व प्यास से व्याकुल हो रही कुन्ती ने पाण्डवों से कहा—मैं पाँच
ता हूँ। पाँचों पुत्र मेरे पास हैं तो भी मैं इस महावन में अनाथ की
ो रही हूँ। कुन्ती के मुँह से बार-बार यही बात सुनकर भीमसेन
के स्नेह और करुणा के मारे उनसे रहा नहीं गया वे फिर माता

और भाइयों को लेकर पानी की तलाश में आगे बढ़े। उस घोर वन में जाकर भीमसेन ने एक बड़ा भारी घनी छाँहवाला मनोहर बरगद का पेड़ देखा। राजन्, भरतकुल-दीपक भीमसेन ने माता और भाइयों को उसी के नीचे उतार दिया। भीमसेन ने उनसे कहा—तुम लोग यहीं पर विश्राम करो। मैं पानी की तलाश में जाता हूँ। यह सुनो, जलविहारी सारस पक्षियों का मधुर शब्द सुन पड़ रहा है। जान पड़ता है, यहाँ पास ही कोई बड़ा भारी जलाशय है। बड़े भाई की आज्ञा लेकर जिधर पक्षियों का शब्द सुन पड़ रहा था उसी ओर भीमसेन चले।

राजन्, उस जलाशय के पास पहुँचकर भीमसेन ने पहले नहाया और पानी पिया। फिर वे पानी में दुपट्टा भिगोकर माता और भाइयों के लिए जल ले चले। भीमसेन जहाँ भाइयों को छोड़ आये थे वहाँ से वह जलाशय दो कोस पर था। दो कोस चलकर भीमसेन फिर माता के पास पहुँचे। उस समय कुन्ती और चारों पाण्डव सो गये थे। उनको इस तरह ऐसी दशा में सोते देखकर भीमसेन को बड़ा ही शोक हुआ। वे साँप की तरह लम्बी साँसें लेते विलाप करते हुए कहने लगे—अहो, मैं अभागा अपनी माता और भाइयों को इस तरह पृथ्वी पर सोते देख रहा हूँ। इससे बढ़कर कष्ट की बात और क्या देखी जा सकती है! जिन्हें वारणावत नगर में बहुमूल्य मुलायम बिछौनेवाले पलँगों पर लेटने पर भी अच्छी तरह नींद न आती थी वे ही आज धरती पर पड़े सो रहे हैं! शत्रुनाशन वसुदेव की बहन, कुन्तिभोज की बेटी, विचित्रवीर्य की बहू, महात्मा पाण्डु की धर्मपत्नी और हम लोगों की माता कुन्ती सब सुलक्षणों से युक्त, कमल के गाभे के समान कान्तिवाली, सुकुमारी और बहुमूल्य पलँग पर सोने के योग्य होकर भी आज वनभूमि में पड़ी सो रही हैं! हाय, धर्म-इन्द्र-वायु के द्वारा महापराक्रमी पुत्रों को पैदा करनेवाली, नित्य महलों के भीतर रहनेवाली कुन्ती थककर प्यास से पीड़ित होकर पृथ्वी पर पड़ी हुई हैं। इससे बढ़कर दुःख और कष्ट की बात और क्या देखने को मिलेगी? मैं इन पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवों को पृथ्वी पर लोटते देख रहा हूँ! अहो, जो धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर तीनों लोकों का राज्य पाने के योग्य हैं वे आज साधारण मनुष्य की तरह थककर पृथ्वी पर सो रहे हैं! ये नीले बादल के समान साँवले, नरश्रेष्ठ, अद्वितीय वीर अर्जुन साधारण पुरुष की तरह पृथ्वी पर पड़े हुए हैं! इससे बढ़कर और दुःख क्या हो सकता है? देवलोक में जैसे अश्विनीकुमार हैं वैसे ही मनुष्यलोक में नकुल और सहदेव अलौकिक रूपवान् हैं। वे ही आज साधारण पुरुषों की तरह धूल में लोट रहे हैं! जिसके कुलकलङ्क जातिवाले नहीं हैं वह गाँव के पेड़ की तरह अकेला बड़े मजे में अपना जीवन बिताता है। गाँव में सजातीयरहित, फल-पुष्प-पत्र-पूर्ण जो अकेला वृक्ष होता है उसी को लोग देवताओं के रहने का स्थान पूजते हैं और बटोही लोग उसका करते हैं जिनके

असंख्य जातिवाले होते हैं और वे सब वीर और धर्मात्मा होते हैं वे भी संसार में सुखपूर्वक अपना जीवन बिताते हैं; उन्हें किसी प्रकार की बाधा का सामना नहीं करना पड़ता। जिनके अनेक सजातीय बली, ऐश्वर्यशाली, बन्धु-बान्धवों की प्रसन्नता को बढ़ानेवाले होकर वन के वृक्षों की तरह परस्पर एक दूसरे को आश्रय देते हुए जीवन बिताते हैं वे भी बड़े सुख में रहते हैं। किन्तु हमारे सजातीय धृतराष्ट्र, दुर्योधन आदि बड़े ही पापी और दुष्ट हैं। उन स्वार्थी अधर्मियों ने हमें देश से निकाल दिया है। विदुर की बुद्धि से और दैव के अनुकूल होने के कारण किसी तरह उस घर में जलने से हम बच गये हैं और अनेक कष्ट उठाकर अन्त को इस वृक्ष के नीचे आकर ठहरे हैं। मालूम नहीं, अब किस ओर जाना होगा। बुद्धिहीन, अदूरदर्शी, धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन! इस समय तू अपनी इच्छा पूरी कर ले। इसमें सन्देह नहीं कि अभी तुझ पर देवताओं की कृपा है; क्योंकि राजा युधिष्ठिर तुझे मारने की आज्ञा मुझको नहीं देते। रे नीच, इसी से तू अब तक जी रहा है। कुपित होकर मैं तुझे और तेरे पुत्र, मन्त्री, भाई, कर्ण, शकुनि आदि सहायकों को अभी यम-लोक भेज सकता हूँ; पर क्या करूँ, धर्मात्मा नरश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर तुझ पर क्रोध ही नहीं करते।

यों कहते हुए भीमसेन क्रोध के मारे तपे अङ्गारे के समान लाल हो उठे और हाथ मलने लगे। शोक के मारे उन्होंने लम्बी साँस ली। फिर बुझी हुई आग की तरह क्षीण होकर भीमसेन पृथ्वी पर साधारण पुरुषों की भाँति बेखटके सो रहे भाइयों की ओर देखने लगे। वे आप ही आप कहने लगे—वारणावत नगर यहाँ से बहुत दूर नहीं है। यहाँ पर जागने की ज़रूरत है। ये सब तो सो रहे हैं इसलिए अब मैं यहाँ जागता रहूँगा। थकन मिटने पर जब ये लोग जागेंगे तब जल पी लेंगे। इस समय इन्हें जगाना ठीक नहीं। यह विचार करके भीमसेन जागते हुए पहरा देने लगे।

हिडिम्बवधपर्व

एक सौ पचपन अध्याय

हिडिम्ब राक्षस का पाण्डवों को देखना और पाण्डवों को मारकर लाने के लिए अपनी बहन हिडिम्बा को भेजना। भीमसेन से हिडिम्बा की बातचीत

वैशम्पायन कहते हैं—राजन्, पाण्डव जिस वृक्ष के नीचे सोये हुए थे उससे थोड़ी ही दूर एक साखू के पेड़ पर मनुष्य-मांसाहारी, महाबली, अत्यन्त पराक्रमी, वर्षाकाल के मेघ के समान काला, हिडिम्ब नाम का एक भयङ्कर, भूखा और निठुर राक्षस बैठा हुआ था। उस दारुण रूपवाले राक्षस की आँखें पीली और पेट बड़ा लम्बा था। मोंछें कच्ची और दाढ़ें पैनी थीं।

कराल थीं। दाढ़ी-मूँछ और सिर के बाल ताँबे के ऐसे लाल थे। गर्द
वृक्ष के समान थे। दोनों कान कील के समान नुकीले और खड़े थे।

उस भयानक आकारवाले, कुरूप, पिङ्गलनेत्र, मांसलोभी, भूखे, भीं
की गन्ध पाकर थोड़ी दूर पर पड़े हुए पाण्डवों को देखा। मनुष्य-गन्ध सूँ
के रूखे और खड़े कड़े बालों को खुजलाते-खुजलाते वह राक्षस बारम्बार पाण्डवों की ओर देखने और जम्हाई लेने लगा। बड़े भारी डील-डौलवाला महाबली वह राक्षस मनुष्य-मांस पाने की आशा से प्रसन्न होकर अपनी बहन से कहने लगा—मनुष्य का मांस खाना मुझे बहुत रुचता है। वही नर-मांस आज दैवयोग से सहज ही पास आ गया है। उसे देखकर मेरे मुँह से लार टपकी पड़ रही है। मेरे आगे के आठ दाँत बड़े नुकीले और पैने हैं। उन्हें मैं जिसके अङ्ग में गड़ा दूँ वह उनके आघात से जीता नहीं बच सकता। वे ही असह्य दाँत आज मैं बहुत दिनों के बाद इन मनुष्यों के कोमल शरीर के मांस में धँसाऊँगा। आज मैं मनुष्य का गला पकड़कर, उसके गले की बड़ी नस तोड़कर, गर्मागर्म फेने से पूर्ण बहुत सा ताज़ा रक्त पियूँगा। तू वहाँ इन लोगों



के पास जा। यह जानने की चेष्टा कर कि ये कौन हैं जो इस वृक्ष की
मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि ये लोग मनुष्य ही हैं; क्योंकि मे
मनुष्य-गन्ध आकर प्रवेश कर रहा है। तू इन मनुष्यों को मारकर जल
यहाँ पर मेरा ही राज्य है। यहाँ सोये हुए मनुष्यों से तुझे कुछ भी डर
इन मनुष्यों के शरीर से मांस नोच-नोचकर सुख से खायँगे। तू मेरा क
जी भरकर मनुष्य का मांस खाकर इसी वन में ताल देकर नाचेंगे।

हे भरतश्रेष्ठ, हिडिम्ब के ये वचन सुनकर हिडिम्बा राक्षसी वहाँ आ
रहे थे। वहाँ पहुँचकर उसने देखा, चारों पाण्डव अपनी माता के साथ प
भीमसेन जाग रहे हैं। नये साखू के समान बड़े ऊँचे कन्धोंवाले अद्विती
मनोहर रूप को देखकर ही वह हो गई वह मन में सोचने लगी

अपने क्रूर भाई की निठुर आज्ञा का पालन नहीं करूँगी। स्त्रियों को
ा है उतना भाई नहीं होता। इन लोगों को मार डालने से मुझे और
स्वाद का मज़ा मिलेगा; किन्तु ये जो जीते रहेंगे तो मैं इस पुरुष-सिंह
इससे सुख भोगती हुई सदा आनन्द से रह सकूँगी।

रख लेनेवाली राक्षसी ने यों विचार करके उसी दम सुन्दर मानुषी-रूप
त्र वह धीरे-धीरे टहलती हुई भीमसेन के पास पहुँची। सुन्दरी, पीन
पयोधरों से मनोहर, कमलमुखी, मनुष्य-रूपधारिणी वह राक्षसी लज्जा और नम्रता का भाव दिखाती हुई कुछ मुसकाकर भीमसेन से कहने लगी—हे पुरुष-श्रेष्ठ, आप कौन हैं? कहाँ से आये हैं? ये जो देवतुल्य पुरुष पड़े सो रहे हैं सो कौन हैं? हे पापरहित, तपे सोने के समान कान्तिवाली कोमलाङ्गी यह स्त्री आपकी कौन है, जो इस घोर वन को अपने घर के समान निर्भय स्थान समझकर बेखटके सो रही है? क्या आप लोग नहीं जानते कि इस वन में राक्षस लोग रहते हैं? यहाँ पर पापी हिडिम्ब नाम का एक राक्षस रहता है। वह मेरा भाई है। हे देवतुल्य पुरुष-श्रेष्ठ,



लोगों का मांस खाने के विचार से, आप लोगों की हत्या के लिए, मुझे
न्तु मैं सच कहती हूँ, देवतुल्य आपको देखकर अब और किसी
के लिए मेरा जी नहीं चाहता। हे धर्मात्मा पुरुष, यह जानकर जो
ो कीजिए। काम ने मेरे हृदय पर अपना अधिकार कर लिया
जने के लिए आग्रह कर रही हूँ। आप कृपा करके मुझे अङ्गीकार
ष, मैं उस नर-मांसाहारी राक्षस से आपको बचा लूँगी। आप मुझे
। हम दोनों जने गिरिदुर्गों में जाकर विहार करेंगे। मैं आकाश-मार्ग
हाँ चाहे वहाँ जा सकती हूँ। मेरे साथ इन स्थानों की सैर करने से
मलेगा

राक्षसी के ये वचन सुनकर भीमसेन ने कहा—हे राक्षसी, ऐसे सुख भोगने के लिए माता, बड़े भाई और छोटे भाइयों को कौन छोड़ देगा? मेरे समान कोई भी पुरुष काम के वश होकर सुख से सोये हुए भाइयों को और माता को राक्षस के मुँह में छोड़कर तेरे साथ जाने की इच्छा नहीं कर सकता। भीमसेन के ये वाक्य सुनकर राक्षसी ने कहा—आप जो कहेंगे वही, आपकी प्रसन्नता के लिए, मैं करूँगी। आप इन लोगों को जगा दीजिए। मैं आपकी इच्छा के अनुसार इन सबको मनुष्य-मांस-भक्षक राक्षस के हाथ से सहज में बचा लूँगी।

भीमसेन ने कहा—राक्षसी, मैं जङ्गल में सो रहे अपने भाइयों को और माता को तेरे दुरात्मा पापी भाई के डर से नहीं जगा सकता। हे भीरु, हे कमल-नयनी! मनुष्य, गन्धर्व, राक्षस, यक्ष आदि कोई भी मेरे पराक्रम को नहीं सह सकते। भद्रे, तू चाहे जा, चाहे ठहर; और चाहे अपने मांस-भोजी भाई को ही यहाँ भेज दे। मुझे उसका डर नहीं है।

एक सौ छप्पन अध्याय

हिडिम्ब का आना। भीमसेन और हिडिम्ब का युद्ध

वैशम्पायन ने कहा—जनमेजय, इसके बाद लाल नेत्र किये, लम्बे हाथ फैलाये, रूखे और खड़े बालों से भयानक, मुँह फैलाये, घनघटा के समान नीले, पैने दाँतोंवाले उस भीममूर्त्ति राक्षस ने जब देखा कि हिडिम्बा को गये बहुत देर हुई, तब वह उस वृक्ष से उतरकर झपटता हुआ पाण्डवों के पास आया। उस विकट आकारवाले राक्षस को आते देखकर हिडिम्बा डर गई। उसने भीमसेन से कहा—देखिए, यह पापी मनुष्याहारी राक्षस क्रोध करके इधर ही आ रहा है। अब मैं जो कहती हूँ सो आप अपने भाइयों-सहित कीजिए। वीर, मैं जाति-सुलभ बल-वीर्य के द्वारा चाहे जहाँ जा सकती हूँ। आप मेरी पीठ पर सवार हो जाइए। मैं आपको आकाश-मार्ग से ले जाऊँगी। हे शत्रुनाशन, आप अपनी माता और भाइयों को जगाइए। आप लोगों को लादकर मैं आकाशमार्ग से भाग चलूँगी।

भीमसेन ने कहा—हे विशाल नितम्बोंवाली सुन्दरी, तुम डरो नहीं। मेरे आगे यह राक्षस कोई चीज़ नहीं है। हे सुन्दर कमरवाली, तुम्हारे आगे ही मैं इसे मारकर यमलोक को भेज दूँगा। भीरु, मेरा सामना तो सब राक्षस मिलकर भी युद्ध में नहीं कर सकते; इस अकेले नीच राक्षस की क्या मजाल है! देखो, मेरे ये कठिन भुजदण्ड हाथी की सूँड़ के समान हैं। जाँघें लोहे के मुद्गर ऐसी कड़ी हैं। मेरा सीना बहुत चौड़ा और मज़बूत है। सुन्दरी, अभी तुम मेरा इन्द्र के समान पराक्रम देखोगी। तुम साधारण मनुष्य जानकर मुझे तुच्छ न समझना

हिडिम्बा ने कहा—पुरुषसिंह, आप देवतुल्य हैं। मैं आपको तुच्छ नहीं समझती परन्तु मैं मनुष्यों के ऊपर इस राक्षस का प्रभाव देख चुकी हूँ; इसी से कह रही हूँ।

वैशम्पायन कहते हैं—हे भरत-नन्दन, भीमसेन और हिडिम्बा से यों बातचीत हो रही थी कि मनुष्याहारी हिडिम्ब राक्षस ने कुपित हो वहाँ आकर सब सुन लिया। उसने देखा कि हिडिम्बा सुन्दर नारी का रूप धारण किये हुए है। उसकी चोटी में फूलों की माला लिपटी हुई है, मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान मनोहर है, नाखून और खाल मुलायम हैं, भौंह-नाक-आँख-केश आदि सब सुडौल हैं, वह सब अङ्गों में गहने पहने हुए है। वह एक महीन सारी पहने है। उसके ऐसे मनोहर मानुषी-रूप को देखते ही राक्षस ताड़ गया कि वह भीमसेन पर रीझ गई है और उनसे अङ्ग-सङ्ग चाहती है। यह देख हिडिम्ब और भी क्रोध से लाल हो गया। हे कौरव-श्रेष्ठ, तब क्रोध से लाल-लाल आँखें निकालकर उसने बहन से कहा—मैं इन मनुष्यों को मारकर इनका मांस खाना चाहता हूँ। इसमें कौन दुर्बुद्धि विघ्न डाल रहा है? हिडिम्बा, मेरा कोप देखकर तुझे डर नहीं लगता? तू क्या इस मनुष्य पर रीझ गई है? अरी कुलटा, तू पुरुष-संसर्ग की इच्छा से मेरा अप्रिय करने को तैयार है। तुझे धिक्कार है! यह काम करके तू पहले के राक्षसराजों की कीर्त्ति में धब्बा लगाना चाहती है। तूने इन्हीं पुरुषों के बल पर साहस करके मेरा अप्रिय किया है। देख, मैं अभी इनको और इनके साथ तुझको भी मारे डालता हूँ।

लाल-लाल आँखों से घूरता और दाँत पीसता वह राक्षस पाण्डवों को मारने के लिए उनकी तरफ़ झपटा। उसे यों गरजते हुए आते देखकर प्रहार करने में निपुण भीमसेन ने खड़ा रह-खड़ा रह कहकर उसे वहीं रोका। उन्होंने सोचा कि माता और भाई जागने न पावें।

वैशम्पायन कहते हैं कि जनमेजय, बहन पर नाराज़ हो रहे उस राक्षस को देखकर हँसते हुए भीमसेन ने कहा—रे दुर्बुद्धि मांसाहारी राक्षस, इन सुख से सो रहे मेरे भाइयों को जगाकर तू क्या करेगा? मेरे सामने आकर चोट कर। स्त्री को क्यों मारने के लिए तैयार है? इसका क्या अपराध है? अपराध तो दूसरे का ही है। यह अबला अपनी ख़ुशी से मुझे भजने के लिए तैयार नहीं हुई। कामदेव ने इसके हृदय पर अधिकार जमाकर इसे ऐसा करने के लिए विवश किया है। रे दुष्ट, रे राक्षसों के यश को कलङ्क लगानेवाले, तेरी बहन तेरी ही आज्ञा से यहाँ आई थी। यहाँ मेरा सौन्दर्य देखकर वह काम के वश हो गई। इसमें इस अबला का क्या दोष? दोष तो कामदेव का है; फिर तू इस पर क्यों नाराज़ हो रहा है? रे दुष्ट, मेरे जीते जी तू इस कामिनी की हत्या नहीं कर सकता। रे मनुष्याहारी, तू अकेला मुझसे युद्ध कर। मैं अकेला ही तुझे अभी यम-लोक में पहुँचा दूँगा। मैं दोनों हाथों से तेरे सिर को ऐसे मसल डालूँगा मानों हाथी के पैर के नीचे कुचल गया हो

इस समय युद्धभूमि में जब तू प्राण छोड़ेगा तब पृथ्वी पर पड़े हुए तेरे मृत शरीर को गिद्ध, बाज़, सियार आदि इधर-उधर घसीटते फिरेंगे। पहले लगातार मनुष्यों को खा करके जिस वन को तूने भयानक बना दिया था उसे, तुझको मारकर, मैं राक्षस-हीन कर दूँगा। रे राक्षस, तेरी बहन देखेगी कि पहाड़ ऐसे हाथी को जैसे सिंह लथाड़ डालता है वैसी ही दशा मैं तेरी करूँगा। तेरे मरने पर इस वन के जीव और मनुष्य यहाँ सुख से फिरेंगे।

हिडिम्ब ने कहा—रे मनुष्य, तेरे इस वृथा गरजने और बकवाद करने से क्या होगा? देर क्यों करता है? जो कह रहा है उसे करके दिखा दे। तू आप ही अपने को बड़ा बली और पराक्रमी समझता है। अभी मुझसे युद्ध करने पर तुझे मालूम पड़ जायगा कि तेरा बल कितना है। अच्छी बात है, मैं अभी इन मनुष्यों को नहीं मारूँगा; इन्हें अभी सुख से सोने दे। अप्रिय कठोर वचन कहनेवाले तुझको ही मैं सबसे पहले मारूँगा। पहले तेरे शरीर का रक्त पीकर फिर इन सबको मारूँगा। पीछे से अप्रिय करनेवाली हिडिम्बा की भी हत्या करूँगा।

महाराज, मनुष्य-मांसाहारी राक्षस अब दोनों हाथ फैलाकर क्रोध के मारे शत्रुनाशन भीमसेन की ओर दौड़ा। भीम-पराक्रमी भीमसेन ने हँसकर तुरन्त ही, वेग से चलाये हुए, उसके दोनों हाथों को पकड़ लिया। फिर बलपूर्वक उसे क़ाबू में लाकर, सिंह जिस तरह छोटे से मृग को घसीटता है उस तरह, वहाँ से बत्तीस हाथ के फ़ासले पर वे घसीट ले गये। इस तरह भीमसेन के पीड़ा पहुँचाने पर वह राक्षस उनके शरीर से लिपटकर बुरी तरह चिल्लाने लगा। उसका चिल्लाना सुनकर कहीं माता और भाई जाग न पड़ें, इस आशङ्का से महाबली भीमसेन और दूर तक उसे घसीटते ले गये। तब भीमसेन और हिडिम्ब दोनों ही परस्पर एक दूसरे को खींचने के लिए ज़ोर लगाने लगे। दोनों ही साठ वर्ष के कुपित मस्त हाथियों की तरह वृक्षों को तोड़ने और लताओं को उखाड़ने लगे। उनके उस घोर शब्द से पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डव जाग पड़े। कुन्ती की भी आँख खुल गई। कुन्ती और पाण्डवों ने सुन्दररूप-धारिणी हिडिम्बा को अपने आगे खड़ा हुआ देखा।

एक सौ सत्तावन अध्याय

हिडिम्ब-वध

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, कुन्ती और पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डवों ने आँख खुलने पर हिडिम्बा के अलौकिक सौन्दर्य को देखकर बड़ा अचम्भा माना। उसके रूप को देखकर चकराई हुई कुन्ती ने शान्त और मधुर स्वर से उससे पूछा हे अप्सरा के समान सुन्दरी, तुम कौन हो?

किसकी स्त्री हो ? किस काम के लिए तुम कहाँ से आई हो ? यदि तुम इस वन की अधिष्ठात्री देवी या अप्सरा हो तो यह बताओ कि यहाँ पर क्यों खड़ी हुई हो ?

हिडिम्बा ने कहा—यह जो मेघ की घटा के समान नीला वन देख पड़ रहा है इसमें हिडिम्ब राक्षस और मैं रहती हूँ। देवी, मैं इस राक्षसराज हिडिम्ब की बहन हूँ। मेरे भाई ने आपको और आपके इन पुत्रों को मारने के लिए मुझे भेजा था। मैं उस दुष्टबुद्धि भाई के कहने से यहाँ आई। यहाँ आकर मैंने तपे हुए सोने के समान कान्तिवाले आपके महाबली बेटे को देखा। सब प्राणियों के शरीर में रहनेवाले कामदेव ने मुझे, आपके पुत्र को देखते ही, अपने वश में कर लिया। मैंने उस काम के वेग को रोकना चाहा, पर किसी तरह सँभाल न सकी। मैंने अपने मन से आपके बेटे को अपना पति मान लिया। मेरे जाने में विलम्ब होने से, आपके पुत्रों को मारने के लिए, मेरा भाई आप आ पहुँचा। श्रीमान्, बुद्धिमान्, महात्मा आपके महाबली पुत्र उसे बलपूर्वक पकड़कर यहाँ से दूर ले गये हैं। वह देखो, मनुष्य और राक्षस, दोनों, युद्ध में अपना-अपना पराक्रम प्रकट करते हुए गर्जन-तर्जन करके एक दूसरे को खींच रहे हैं।

महाराज, उसके ये वचन सुनकर पराक्रमी युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव चारों भाई जल्दी से उठकर युद्ध-स्थल में पहुँचे। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि बली सिंहों की तरह भीमसेन और राक्षस, दोनों, जय की आशा से एक दूसरे को खींच रहे हैं। दोनों एक दूसरे से लिपटे हुए हैं। उनके इस युद्ध में दावानल के धुएँ के समान धूल उड़ रही है। उस धूल के पड़ने से उनके शरीर कुहरे से ढके हुए पहाड़ों की तरह जान पड़ते हैं।

तब राक्षस के साथ युद्ध करने में भीमसेन को क्लेश पाते देखकर अर्जुन ने हँसते हुए धीरे से कहा—भाई भीम, आप क्यों कष्ट उठा रहे हैं ? बहुत ही थक जाने के कारण हम सो गये थे। इसी से हमको नहीं मालूम हुआ कि ऐसे भयङ्कर राक्षस के साथ आपको भिड़ना पड़ा है। भाई, मैं आपकी सहायता करने के लिए खड़ा हूँ। कहो तो अभी इस राक्षस को मार डालूँ ? नकुल और सहदेव माता कुन्ती की रक्षा करेंगे।

भीम ने कहा—भैया, तुम इसमें हाथ न डालो। तुम खड़े-खड़े देखो; इतना घबराने की ज़रूरत नहीं। जब यह राक्षस मेरे दोनों वज्रसदृश हाथों के बीच में आ गया है तब बिना मारे मैं इसको छोड़ नहीं सकता।

अर्जुन ने कहा—भीम, इस राक्षस को और अधिक समय तक जीवित रखने की क्या ज़रूरत है ? हे शत्रुदमन, यदि मुझसे आप यहाँ से जाने के लिए कहते हैं तो अधिक विलम्ब न कीजिए। थोड़ी देर में सबेरा होना चाहता है; पूर्व दिशा में ललाई देख पड़ने में अब अधिक विलम्ब नहीं है इस रौद्र मुहूर्त्त में राक्षस प्रबल हो उठते हैं हे भीम, जल्दी कीजिए, डर

भयानक राक्षस के साथ खेलिए मत। इसे मारिए; यह अभी माया-बल है। अपने बाहुबल से इसे पछाड़कर मार डालिए।

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, अर्जुन के ये वचन सुनकर भीम उठे। वे प्रलयकाल की आँधी के समान राक्षस पर टूट पड़े। कुपि के समान राक्षस को ऊपर उठाकर सैकड़ों बार सिर के ऊपर घुमा हिडिम्ब से कहा—अरे दुर्बुद्धि राक्षस, तूने मनुष्यों को खा-खाकर उनके यह शरीर मोटा किया है; इसलिए तू निकम्मी मौत के ही योग्य है मारकर इस वन को निष्कण्टक निर्भय बनाये देता हूँ। मनुष्यों को मा जीता न छोड़ूँगा।

अर्जुन ने भीम से कहा—जो आपको यह राक्षस युद्ध में भारी यता देता हूँ। अब इसे शीघ्र मार डालिए। या कहिए तो इसे मैं ही म इससे लड़ते-लड़ते थक गये हैं। तनिक विश्राम कर लीजिए। यह सुनकर भीमसेन ने उस राक्षस को पृथ्वी पर पटक दिया। खूब नीचे पीसकर, दोनों हाथों से गला दबाकर, भीमसेन ने पशु की मार से उसे मारा। मरते समय उस राक्षस ने गीले डङ्के के ऐसे अस्पष्ट घोर शब्द से उस वन को गुँजा दिया। बलवान, महाबाहु पाण्डुपुत्र भीम ने राक्षस को मारकर, बाहुबल से उसकी कमर तोड़कर, अपने भाइयों को सन्तुष्ट किया। राक्षस के मरने पर चारों भाइयों ने भीम को गले से लगा लिया और अनेक धन्यवाद दिये। भीमसेन की बड़ाई करके अर्जुन ने उनसे कहा—जान पड़त वारणावत नगर बहुत दूर नहीं है। इसलिए, हम लोगों को यहाँ से जल्द ऐसा करना चाहिए जिसमें दुर्योधन को हमारे जीते रहने का पता न लगे।



अर्जुन का कहना मानकर माता को लिये हुए सब भाई वहाँ से साथ-साथ हिडिम्बा भी चली।

एक सौ अट्ठावन अध्याय

डिम्बा का भीम से ब्याह । घटोत्कच का जन्म । हिडिम्बा और घटोत्कच का चला जाना

हैं कि राजन्, हिडिम्बा को पीछे-पीछे चुपचाप आते देखकर भीमसेन ने लोग पहले के वैर को भूलते नहीं; वे मोहनी माया का आश्रय ते हैं। इस कारण यही अच्छा है कि तू भी अपने भाई के साथ

ष्ठिर ने कहा—भीम, [क्रोध को शान्त करो।] स्त्री की हत्या करना रीर से भी बढ़कर रक्षणीय है। इसलिए तुम धर्म की रक्षा करो। ा मारने आया था; उसी को जब तुमने मार डाला तब यह राक्षस की हमारा क्या विगाड़ सकती है ?

बा ने कुन्ती और युधिष्ठिर को प्रणाम किया और फिर कुन्ती से हाथ त्रियों के लिए काम-वेदना कैसी असह्य होती है सो आप अच्छी तरह जान सकती हैं। शुभरूपिणी, भीमसेन के कारण वही यन्त्रणा मुझे मिल रही है। अब तक समय की अपेक्षा करके वह असह्य वेदना मैं सह रही थी। अब वह सुखमय समय आया है। अपने बन्धुवर्ग, आत्मीय-जन और अपने राक्षसी धर्म को छोड़कर मैंने आपके पुत्र पुरुष-प्रधान भीमसेन को मन में अपना पति मान लिया है। यश-स्विनी, यदि आप मेरी सहायता



पुत्र भीमसेन मुझे स्वीकार न करेंगे तो मैं, सच कहती हूँ, अपने प्राण भक्त या अनुगत, चाहे जो समझकर आप मुझ पर कृपा कीजिए। आप उसमें आपके पुत्र भीमसेन पति होकर मुझे ग्रहण करें। आप मुझ पर आपके देवतुल्य पुत्र को [दिन के समय] अपने साथ ले जाकर यथे

स्थानों में विहार करूँगी, और [रात के समय] फिर आपके पास पहुँचा जाऊँगी। आप लोग जिस समय जहाँ, काम पड़ने पर मुझे, स्मरण करेंगे वहाँ उसी दम आकर, जहाँ कहोगे वहाँ, सबको अपनी पीठ पर लादकर पहुँचा दूँगी। दुर्गम विषम स्थान में कोई विपत्ति आने पर मैं उससे उबार लूँगी। [पुण्यात्मा लोग जैसे विमानों पर विचरते हैं वैसे ही] मैं आप लोगों को पीठ पर लादकर आकाशमार्ग में ले चलूँगी। आप लोग प्रसन्न होकर ऐसा कर दीजिए कि भीमसेन मुझे अङ्गीकार कर लें। विपत्ति से बचने के लिए—जिस तरह हो—जीवन की रक्षा करनी चाहिए; धर्म पर दृष्टि रखकर ही सब काम करने चाहिएँ। धर्मात्मा पुरुष के धर्माचरण मे विपत्ति ही भारी बाधा है। इस कारण आपत्काल में भी जो लोग धर्म का पालन करते हैं वही सच्चे धर्मात्मा हैं। पण्डितों का कहना है कि जीवन-रक्षा के लिए पुण्य-कार्य करने चाहिएँ। पुण्य ही जीवन-दान कर सकता है। इसलिए चाहे जिस तरह हो, आपत्ति से बचकर शरीर-रक्षा करते हुए धर्माचरण करना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य की निन्दा नहीं होती।

युधिष्ठिर ने हिडिम्बा से कहा—तुम्हारा कहना बहुत ही ठीक है। तुम जो कह चुकी हो, उसी के अनुसार काम करना—धर्मपूर्वक प्रतिज्ञा का पालन करना। स्नान, आह्निक, स्वस्त्ययन आदि जब भीमसेन कर चुकें तब तुम उन्हें अपने साथ ले जाना। सन्ध्या तक तुम उनको अपने पास रख सकोगी। दिन भर इच्छापूर्वक भीम के साथ सुख भोगकर रात के समय उन्हें यहीं पहुँचा देना।

वैशम्पायन कहते हैं कि युधिष्ठिर की आज्ञा मानकर भीमसेन ने हिडिम्बा से कहा—हिडिम्बा, मैं तुमसे यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक तुम्हारे पुत्र न उत्पन्न होगा तभी तक मैं तुम्हारे साथ जाऊँगा।

महाराज, राक्षसी ने यह स्वीकार कर लिया। वह भीमसेन को लेकर आकाश-मार्ग में उड़ जाती थी; [दिन भर उनके साथ रहती और रात को कुन्ती के पास उन्हें पहुँचा जाती थी।] मन के समान शीघ्र जानेवाली वह कामरूपिणी राक्षसी मनोहर रूप धारण किये, उत्तम गहने पहने, समय-समय पर, भीमसेन को लेकर भिन्न-भिन्न स्थानों में भ्रमण करने लगी। वह राक्षसी कभी मनोहर पर्वत-शिखरों पर, कभी देवमन्दिरों में, कभी मृगों से युक्त और पक्षियों के कल-नाद से पूर्ण वनों में, कभी फूले हुए वृक्षों से शोभित पहाड़ों की तरहटी में, कभी नीले और लाल कमलों से शोभित सरोवरों के किनारे, और कभी वैदूर्य और बालू से शोभित टापुओं में भीमसेन को ले जाकर प्रसन्न करने लगी। वह राक्षसी कभी पवित्र जलवाली पहाड़ी नदियों के किनारे, कभी देवस्थानों से युक्त बागों में, कभी मणि और सुवर्ण से युक्त समुद्र के आसपास, कभी यक्षों के राज्य में, कभी हिमालय आदि कुलाचलों की ऊँची चोटियों पर और कभी

सब ऋतुओं के फूलों से शोभित मानस सरोवर के निकट भीमसेन को ले जाकर—वहाँ की सैर कराकर—प्रसन्न करने लगी।

अन्त को उस राक्षसी के भीमसेन से गर्भ रह गया और यथासमय एक लम्बे-चौड़े डील-डौलवाला भयानकरूप पुत्र उत्पन्न हुआ। वह अनुपम बल-वीर्यवान्, बेजोड़ धनुर्द्धर, मायावी, शत्रुनाशन और भीमवेगवान् हुआ। उस मनुष्य के वीर्य से उत्पन्न अमानुष बालक के हाथ बड़े-बड़े, आँखें भयानक और छोटी-छोटी, मुख फैला हुआ, कान कील ऐसे नुकीले, शब्द बहुत ही भयङ्कर, ओठ लाल-लाल, दाँत और दाढ़ें पैनी, नाक लम्बी, सीना चौड़ा, पिंडलियाँ टेढ़ी और ऊँची थीं। वह सब पिशाचों और राक्षसों से बढ़कर पराक्रमी हुआ। राजन्, बचपन में ही वह जवानों के समान बली हो गया। सब अस्त्र-शस्त्र चलाने की चातुरी उसे आप ही से आ गई। राक्षसियाँ गर्भ धारण करके उसी समय बालक उत्पन्न करती हैं। वे अपनी इच्छा के अनुरूप तरह-तरह के रूप धारण कर सकती हैं। महाधनुर्द्धर उस हिडिम्बा के पुत्र ने उत्पन्न होते ही समर्थ होकर माता और पिता के चरणों में प्रणाम किया। उन्होंने भी उसका नामकरण किया। उस बालक के कच (केश) ऊपर उठे हुए थे और मुख घट (घड़े) के समान था। उसे दिखाकर हिडिम्बा ने भीमसेन से कहा—इस बालक का मुँह घड़े के समान है और बाल खड़े हुए हैं। इसी के अनुसार भीमसेन ने उसका नाम घटोत्कच रक्खा। घटोत्कच सदा स्वतन्त्र रहकर पाण्डवों की आज्ञा का पालन करता था। पाण्डव भी उसको बहुत प्यार करते थे।

इसके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार हिडिम्बा ने पाण्डवों से कहा—अब मैं जाती हूँ; क्योंकि प्रतिज्ञा के अनुसार स्वामी के सहवास का समय पूरा हो गया। बस, वह राक्षसी उत्तर दिशा को चली गई। घटोत्कच ने कुन्ती-समेत पाण्डवों को प्रणाम करके कहा कि मैं आपका सेवक हूँ। उससे कुन्ती ने कहा कि तुम्हारा जन्म कुरुवंश में हुआ है; तुम पाण्डवों के बड़े लड़के हो। समय पर सहायता करना। वैशम्पायन कहते हैं कि घटोत्कच भी पाण्डवों से "आवश्यकता होते ही स्मरण करने से मैं आ जाऊँगा" कहकर उत्तर दिशा को चल दिया। इन्द्र भगवान् ने कर्ण की एकघातिनी शक्ति से अर्जुन को बचाने के लिए, महाबली कर्ण से भिड़ाने को, महारथी घटोत्कच को उत्पन्न किया।

एक सौ उनसठ अध्याय

पाण्डवों से व्यास की भेंट और एकचक्रा नगरी में जाकर पाण्डवों का रहना

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, अब महात्मा पाण्डव जटाएँ रखाकर, मृगछाला और वल्कल पहनकर तपस्वियों के वेश से वनों में घूमते हुए आगे बढ़े। वे राह में मृगों का शिका

करके उन्हीं का मांस खाते थे। जाते समय उन्होंने मार्ग में मत्स्य, त्रिग
आदि देशों के मनोहर वनों और सरोवरों की खूब सैर की। वे कहीं-कहीं
माता कुन्ती को कन्धे पर चढ़ा लेते थे। सुरक्षित स्थान में पहुँचने पर
और फिर कहीं पर तेज़ी से चलने लगते थे।

जाते-जाते एक दिन एक स्थान पर पाण्डवों ने अपने पितामह भगव
वे लोग वेद, वेदाङ्ग और नीतिशास्त्र पढ़ रहे थे। व्यासजी को देखते ही
प्रणाम करके आगे खड़े हो गये। व्यासजी ने कहा—पुत्रो, धृतराष्ट्र के बेटों ने अधर्म करके तुमको निकाल दिया है। तपोबल से यह बात मुझे उसी समय मालूम हो गई थी। इसी से तुम्हारा हित करने के लिए मैं यहाँ पर आया हूँ। दुर्योधन ने तुमको निकाल दिया है, इसके लिए तुम कुछ खेद न करो। यह जो कुछ हुआ है और हो रहा है उससे आगे चलकर तुमको सुख ही होगा। यद्यपि तुम और दुर्योधन आदि, दोनों पर मुझे एकसा स्नेह रखना चाहिए, तथापि मैं तुम्हीं पर अधिक



स्नेह रखता हूँ। कारण यही है कि ऐसी जगह पर जो निर्बल और बाल
लोग प्यार करते हैं; उसी से लोगों की विशेष सहानुभूति होती है। इ
हितचिन्तक हूँ। तुम लोग यह जो निकट ही नगरी देख रहे हो इसक
यहाँ तुम्हारे लिए कुछ भी डर नहीं है। जब तक मैं न आऊँ तब तक तुम

राजन्, सत्यवती-पुत्र धर्मात्मा व्यासदेव इस प्रकार धीरज देकर पाण
हुए एकचक्रा नगरी की ओर चले। जाते-जाते उन्होंने कुन्ती को आश्वास
कहा—पुत्री, तुम जीती रहो, घबराओ नहीं। तुम्हारे पुत्र धर्मात्मा, महात्म
युधिष्ठिर धर्मपूर्वक पृथ्वीमण्डल को जीतकर सब राजाओं पर हुकूमत करें
अर्जुन के बाहुबल की सहायता से समुद्र-पर्यन्त पृथ्वीमण्डल पर अपना अधि
की स्थापना और सुखभोग करेंगे। तुम्हारे और माद्री के ये महारथी पाँचों
बड़े आनन्द से सुख भोगेंगे ये पुरुषसिंह पृथ्वी को जीतकर राजसू

यज्ञ करते हुए ब्राह्मणों को ख़ूब दक्षिणा देंगे। ये भोग, ऐश्वर्य और सुख देकर भाई-बन्धुओं को प्रसन्न करके बड़े आनन्द से अपना बाप-दादे का राज्य करेंगे।

महाराज, यों कहकर व्यास ने एकचक्रा नगरी में एक ब्राह्मण के यहाँ कुन्ती और पाण्डवों के रहने का प्रबन्ध कर दिया। फिर युधिष्ठिर से कहा—तुम इसी जगह रहकर मेरी बाट जोहना। देश-काल का विचार करके उसी के अनुसार चलने से तुमको कुछ कष्ट न होगा।

हाथ जोड़कर पाण्डवों ने व्यास के वचनों को सुना और स्वीकार किया। इसके उपरान्त व्यासजी वहाँ से यथेष्ट स्थान को चले गये।

बकवधपर्व

एक सौ साठ अध्याय

ब्राह्मण का रोना सुनकर कुन्ती को दया आना। ब्राह्मण का विलाप

जनमेजय ने पूछा—ब्रह्मन्, महारथी कुन्तीपुत्र पाण्डवों ने एकचक्रा नगरी में रहकर इसके उपरान्त क्या किया? वैशम्पायन ने कहा—राजन्, महारथी पाण्डव एकचक्रा नगरी में ब्राह्मण के यहाँ कुछ ही दिनों तक रहे। इस समय वे नित्य अनेक मनोहर वन, सरोवर, नदी आदि की सैर करते हुए भिक्षा माँगकर गुज़र करने लगे। अपने गुणों के कारण वे धीरे-धीरे वहाँ के निवासियों को बहुत प्रिय हो गये। वे दिन को भीख माँगकर जो कुछ पाते सो रात को आकर माता कुन्ती के आगे रख देते थे। कुन्ती वह भिक्षा में मिली हुई सामग्री बाँटकर उन्हें देती थीं और वे खाते थे। भिक्षा में जो कुछ मिलता था सो आधा भीमसेन खाते थे और आधे में युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल, सहदेव और कुन्ती गुज़र करती थीं। महाराज, पाण्डवों ने इस तरह उस नगरी में कुछ समय बिताया।

एक दिन युधिष्ठिर आदि चारों भाई भीख माँगने के लिए गये; दैवयोग से भीमसेन घर में माता के पास ही रह गये। इसी बीच में कुन्ती को उस ब्राह्मण के घर में एकाएक रोना-पीटना सुन पड़ा। वे दयालु और कोमल स्वभाव की थीं; इसी से वह विलाप का शब्द सुनकर उनसे रहा नहीं गया। वे ब्राह्मण के परिवार का रोना-पीटना न सुन सकीं। असह्य दुःख से उनके हृदय को मानों कोई मथने लगा। सुन्दरी कुन्ती ने भीमसेन से कहा—बेटा, हम इस ब्राह्मण के यहाँ बड़े आराम से रहते हैं। धृतराष्ट्र का पुत्र दुष्ट दुर्योधन यहाँ हमारा पता नहीं पा सकता। ब्राह्मण हमारा बड़ा आदर-सत्कार करता है। मैं सदा यही सोचा करती हूँ कि जैसे दुर्वासा आदि महात्मा जिसके यहाँ रहते हैं उसी का हित करते हैं वैसे ही मैं भी किस तरह कब इसका उपकार कर सकूँगी पुत्र, किसी के किये हुए उपकार के बदले में

जो लोग उपकार करते हैं वही सचमुच पुरुष हैं। जो किसी के किये उपकार को नहीं भूलता वही सत्पुरुष है। मनुष्य को चाहिए कि जितना उसका उपकार कोई करे उससे अधिक ही उसका उपकार कर दे। मुझे जान पड़ता है, इस ब्राह्मण पर कोई घोर दुःख आ पड़ा है। जो मैं इस समय इसकी सहायता नहीं करूँगी तो अनुचित होगा।

कुन्ती के ये वचन सुनकर भीमसेन ने कहा—पहले आप यह जानने की चेष्टा कीजिए कि ब्राह्मण पर क्या दुःख आ पड़ा है और किसने उसे दुःख दिया है। फिर अत्यन्त कष्टसाध्य होने पर भी मैं उसको दूर करने का उपाय करूँगा।

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, कुन्ती और भीमसेन में यह बातचीत हो ही रही थी कि फिर ब्राह्मण और ब्राह्मणी के रोने का शब्द सुन पड़ा। जिसका बछड़ा बाँध लिया गया हो ऐसी गाय जैसे दौड़कर बछड़े के पास जाती है वैसे ही विह्वल भाव से दौड़कर कुन्ती उस ब्राह्मण के घर में गईं। भीतर जाकर उन्होंने देखा कि ब्राह्मण अपनी स्त्री, बेटे और बेटी के साथ विलाप कर रहा है। ब्राह्मण कह रहा है कि इस संसार में जीवित रहने से मनुष्य को पराधीन होकर अनेक अनिष्ट घटनाएँ देखनी पड़ती हैं और दारुण दुःख सहने पड़ते हैं। इस कारण ऐसे सारांशहीन निष्फल जीवन को धिक्कार है। ज़िन्दा रहने से अपार दुःख और मानसिक पीड़ा सहनी पड़ती है। जो पुरुष जीवित है उसे अवश्य ही सुख-दुःख आदि द्वन्द्वों का सामना करना पड़ेगा। देखो, एक आत्मा ही धर्म, अर्थ और काम—इस त्रिवर्ग का सेवन करता है। इन तीनों के अभाव से अनन्त दुःख भोगना पड़ता है। कुछ लोग मोक्ष को ही श्रेष्ठ बताते हैं; किन्तु हमको संसार पर अनुराग है इस कारण हम मोक्ष पाने के अधिकारी भी नहीं हैं। ख़ास कर मुझे उस मोक्ष की चाह भी नहीं। इसके सिवा अर्थ (धन) भी दुःख की जड़ है। अर्थ प्राप्त करने में सम्पूर्ण रूप से नरक-भोग का जैसा कष्ट उठाना पड़ता है। धन कमाने की लालसा दुःख का कारण है। धन मिलने पर भी सुख नहीं; उसमें उससे बढ़कर कष्ट उठाने पड़ते हैं। धन पर ममता हो जाने पर यदि किसी तरह उस धन का नाश हो गया तो उसमें सबसे बढ़कर दुःख भोगना पड़ता है। मुझे इस समय इस आपत्ति से छुटकारा मिलने का कोई भी उपाय नहीं सूझ पड़ता। मैं सोचता हूँ कि क्या पुत्र-स्त्री आदि को लेकर किसी निर्भय स्थान में भाग जाऊँ ? प्रिये, मैं पहले कई बार तुमसे किसी उपद्रवहीन स्थान में भाग चलने के लिए कह चुका हूँ; किन्तु तुमने नहीं माना। मैंने जब तुमसे कहा कि चलो, इस जगह से और किसी अच्छी जगह उठ चलें, तब तुमने दुर्बुद्धिवश यही कहकर टाल दिया कि नहीं, यह मेरे बाप-दादे का घर है। यहीं मेरे पिता-माता रहते थे। यहीं पैदा होकर मैं इतनी बड़ी हुई हूँ। इसलिए इस स्थान को मैं नहीं छोड़ सकती। ब्राह्मणी, तुम्हारे माता पिता और बन्धु-बान्धव बहुत दिन पहले ही इस स्थान को छोड़कर स्वर्ग सिधार



चुके हैं; फिर यह स्थान छोड़कर दूसरी जगह जाने को तुम्हारा जी क्यों न चाहा? तुमने बन्धुओं के स्नेह से मेरी बात नहीं सुनी। इसी से यह तुम्हारे बन्धुओं के नाश का अवसर आ गया। इससे इस समय मुझे बड़ा दुःख हो रहा है। इस समय मैं ही अपने प्राण दूँगा; क्योंकि मैं आप जीवित रहकर बन्धुओं के विनाश को न देख सकूँगा। तुम मेरी सहधर्मिणी हो और जननी के समान स्नेह करती हो। तुम अपनी इन्द्रियों को वश में रखकर सदा नम्र भाव से रहती हो। देवताओं ने तुम्हें ही मेरा जन्म भर का साथी और सखा बना दिया है। तुम्हीं मेरी परमगति हो। तुम अच्छे कुल में उत्पन्न और सुशीला हो। तुम मुझे पुत्र देनेवाली, गृहस्थाश्रम का आधा अङ्ग, पतिव्रता और अपकार न करनेवाली स्त्री हो। पिता-माता की आज्ञा से, शास्त्रोक्त विधि के अनुसार, मन्त्रपाठ-पूर्वक मैंने तुम्हारा पाणि-ग्रहण किया है। अपने जीवन के लिए तुम ऐसी अनुगत स्त्री को मैं कैसे छोड़ सकता हूँ! इस अपने बालक पुत्र को भी, जिसकी मसें तक अभी नहीं भीगीं, मैं नहीं छोड़ सकता। कन्या को भी अपनी जान बचाने के लिए नहीं त्याग सकता। विधाता ने, उपयुक्त पात्र के हाथ में देने के लिए, यह कन्या-रत्न धरोहर के तौर पर मुझे सौंपा है। मैं आशा किये हुए हूँ कि इसके पुत्र (दौहित्र) होने से मैं अपने पितरों के साथ उन अक्षय लोकों में जाऊँगा जिनमें नातीवाले लोग जाते हैं। फिर मैं अपने जीवन की रक्षा के लिए इस अपनी पैदा की हुई बालिका कन्या को कैसे छोड़ सकता हूँ! लोग कहते हैं, पुत्र पर ही पिता का प्यार अधिक होता है। कुछ लोग कहते हैं कि कन्या अधिक प्यारी होती है परन्तु मैं तो दोनों को समान स्नेह-पात्र समझता हूँ। कन्या से सद्गति प्राप्त होती है; कन्या से वंश की रक्षा होती है और कन्या से अक्षय सुख मिलता है। इस कारण मैं निरपराध बालिका कन्या को मृत्यु के मुख में भेजने का साहस नहीं कर सकता। और, जो मैं आप अपने को नष्ट करता हूँ तो भी मुझे दुःख ही होगा; क्योंकि मेरे परिवार की ज़िन्दगी मेरे ही जीवन पर निर्भर है। मेरे बाद उसका भरण-पोषण कौन करेगा? परिवार के किसी आदमी का त्याग निन्दित और निठुर काम समझा जाता है। मैं अपना जीवन दे दूँगा तो भी ये जी नहीं सकते। इस कारण मैं बड़े असमञ्जस में पड़ा हूँ। हाय, इस विपत्ति से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं देख पड़ता। मुझे धिक्कार है! मेरे और मेरे इस परिवार के बचने का और कोई उपाय ही नहीं है। इस कारण परिवार-सहित मेरा मरना ही भला है। यही मेरा इस समय कर्त्तव्य है। जीवित रहना मेरे लिए किसी तरह उचित नहीं।

एक सौ इकसठ अध्याय

ब्राह्मणी का विषाद

ब्राह्मणी ने कहा—स्वामी, आप पण्डित हैं; इसलिए साधारण पुरुषों की तरह शोक करना आपको उचित नहीं। यह शोक का समय नहीं है। पृथ्वी पर जितने मनुष्य हैं उनको अवश्य ही एक दिन मरना होगा। इसलिए जो बात अवश्य होनेवाली है उसके बारे में शोक करना वृथा है। लोग अपने सुख के लिए ही पत्नी, पुत्र और कन्या की इच्छा करते हैं। इस लिए आप सद्बुद्धि को ग्रहण करके अपनी चिन्ता को दूर कीजिए। मैं आपका जीवन बचाने के लिए स्वयं जाऊँगी। इस संसार में पत्नी को प्राण देकर भी पति का हित करना चाहिए। यही स्त्री-जाति का सनातन धर्म है। इस कारण मैं प्राण त्यागकर इस लोक में यश और परलोक में अक्षय सद्गति प्राप्त करूँगी। साथ ही मेरे इस काम से आपको भी सुख प्राप्त होगा—जीवन बच जायगा। मैंने यह स्त्री का श्रेष्ठ धर्म समझ रक्खा है। हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ, जीवन-रक्षा होने से आप अधिकाधिक धर्म और अर्थ का उपार्जन कर सकेंगे। जिस उद्देश से लोग भार्या को स्वीकार करते हैं उसे मैं सिद्ध करूँगी। पुत्र और कन्या उत्पन्न करके मैंने आपका पितृ-ऋण चुका दिया है। आप जीवित रहेंगे तो इस पुत्र और कन्या का भरण-पोषण और देख-रेख कर सकेंगे; किन्तु मैं जीवित रहकर इस कार्य को भली भाँति नहीं कर सकती। [आपका मेरे प्राण और सम्पत्ति आदि सर्वस्व पर अधिकार है।] आप परलोक सिधार जायँगे तो मैं आपके बिना किस तरह जीवन धारण कर सकूँगी? आपकी मृत्यु के उपरान्त ये दोनो बच्चे ही किस प्रकार जीवित रह सकेंगे? आपके न रहने पर मैं ही किस तरह अच्छी राह पर स्थिर रहकर इनके जीवन की रक्षा कर सकूँगी? आपके बाद यदि आपके घराने के साथ विवाह-सम्बन्ध के अयोग्य पात्र, कलङ्की और दर्प से उद्धत लोग इस कन्या के लिए प्रार्थना करेंगे तो मैं किस तरह इस कन्या की रक्षा कर सकूँगी? आकाशचारी गिद्ध आदि पक्षी जैसे ज़मीन पर पड़े हुए मांस के टुकड़े को ताकते और उस पर झपटते हैं वैसे ही लोगों को विधवा स्त्री को देखने से लोभ होता है। हे द्विजोत्तम, विधवा हो जाने पर दुष्ट लोग मेरे चित्त को चलायमान कर सकते हैं। नाथ, तो मैं उस अवस्था में किस तरह—साधुजन जिसकी बड़ाई करते हैं उस—सुमार्ग पर टिकी रह सकूँगी? मैं आपकी इस बालिका कन्या को ही किस तरह आपके बाप-दादे की चाल पर चलाने में समर्थ हो सकूँगी? आप धर्मतत्त्व के ज्ञाता हैं, आप इस बालक को जैसी विद्या पढ़ा सकेंगे वैसी शिक्षा भला मैं कैसे दे सकूँगी? जैसे कोई शूद्र वेद सुनने की इच्छा करे वैसे ही अयोग्य दुष्ट लोग इस कन्या का पाणि-ग्रहण करने की इच्छा करेंगे। यदि मैं इस कन्या को उनके हाथ में न देना चाहूँगी तो जिस तरह कौआ यज्ञ के घी को ले भागे उसी तरह वे लोग मेरा तिरस्कार करके इस कन्या को हर ले जाने की चेष्टा करेंगे

मैं कुछ ठीक नहीं कर पाती कि मेरी तब क्या दशा होगी। उस दशा में आपके इस बालक को नालायक़ और इस कन्या को अयोग्य पात्र के हाथ में देखकर मैं अवश्य अपने प्राण दे दूँगी। तब ये आपके और मेरे न रहने पर जलहीन मछली की तरह तड़प-तड़पकर जान दे देंगे। इसलिए आप विचार करके देखिए, आपके मरने पर मैं और ये दोनों बच्चे भी अवश्य मर जायँगे। इसलिए मेरी समझ में मेरा त्याग ही आपका कर्त्तव्य है। ब्रह्मन्, धार्मिक लोगों का कहना है कि पुत्रवती स्त्री यदि स्वामी से पहले मर जाय तो वह उसके लिए बड़े सौभाग्य की बात है। आपको सुखी रखने के लिए मैं पुत्र, कन्या और अपना जीवन सब छोड़ने को तैयार हूँ। स्त्रियों को चाहिए कि विविध यज्ञ, तपस्या, व्रत और दान आदि सबसे स्वामी का प्रिय और हित करने को श्रेष्ठ समझें। इसलिए मैंने जो करना विचारा है वही कर्त्तव्य और धर्मसङ्गत है। उससे आपका और आपके वंश का भला होगा। पण्डित लोग कहते हैं कि विपत्ति से उबारने के लिए ही लोग स्त्री, पुत्र और कन्या का भरण-पोषण करते हैं। आपत्ति से छुटकारा पाने के लिए धन का सञ्चय करना चाहिए, धन के द्वारा स्त्री की रक्षा करनी चाहिए। किन्तु स्त्री के द्वारा हो और चाहे धन के द्वारा हो, सर्वदा अपनी रक्षा करनी चाहिए। पण्डित लोगों ने निश्चय करके कहा है कि दृष्ट और अदृष्ट दोनों तरह के फल प्राप्त करने के लिए लड़की-लड़के उत्पन्न करने चाहिएँ, ब्याह करना चाहिए और घर बनाकर अर्थोपार्जन करना चाहिए। एक ओर वंश को और दूसरी ओर अपने को रखकर तौलने से सारे वंश की अपेक्षा अपना ही पल्ला भारी देख पड़ेगा। इसलिए हे आर्य, मेरे द्वारा अपनी आपत्ति टालिए; बुद्धि को स्थिर करके अपनी रक्षा कीजिए। मुझे ही जाने के लिए आज्ञा दीजिए। आप इस पुत्र और कन्या का भरण-पोषण कीजिएगा। धार्मिक लोग कहा करते हैं कि स्त्री-जाति अवध्य है; और राक्षस लोग भी धर्मज्ञ होते हैं। इसलिए सम्भव है, वह राक्षस मुझको न मारे। हे धर्मज्ञ, इस स्थल पर पुरुष का वध निश्चित और स्त्री का वध अनिश्चित देख पड़ता है। इस कारण मुझे ही वहाँ भेजना उचित है। मैं बहुत सुख भोग चुकी हूँ। आप भी मेरा बहुत कुछ प्रिय कर चुके हैं। मैं बहुत धर्म-सञ्चय कर चुकी हूँ और आपसे सन्तान भी प्राप्त कर चुकी हूँ। इसलिए जीवन-त्याग करने में मुझे तनिक भी दुःख न होगा। मैं सन्तान उत्पन्न कर चुकी हूँ, वृद्ध हो आई हूँ, और सदा आपका हित किया करती हूँ। यही सब सोच-विचारकर मैंने अपने प्राण देना ही निश्चित कर लिया है। इसके सिवा मेरे न रहने पर आप दूसरा ब्याह कर सकते हैं; इस कारण फिर धर्माचरण कर सकेंगे। हे मङ्गल-निधान, पुरुष बहुविवाह करने से धर्म-भ्रष्ट नहीं होता; किन्तु स्त्री यदि पहले पति को अग्राह्य करके दूसरे पुरुष का आश्रय ले लेती है तो उसे पाप लगता है। आप इन सब बातों पर विचार करके और आत्महत्या को निन्दित समझकर अपने वशवर पुत्र-कन्या की और अपनी रक्षा कीजिए

वैशम्पायन कहते हैं—हे भरत-नन्दन, ब्राह्मण अपनी स्त्री के ये वचन सुनकर उससे लिपट गया और असह्य दुःख के मारे दोनों रोने लगे।

एक सौ बासठ अध्याय

ब्राह्मण के बेटे-बेटी की उक्ति

वैशम्पायन ने कहा कि इसके बाद शोकार्त्त माता-पिता की इन बातों को आदि से अन्त तक सुनकर वह कन्या दुःखित हो कहने लगी—आप लोग किसलिए शोक से अधीर होकर अनाथ की तरह रो रहे हैं? मैं एक बात कहती हूँ, उसे सुनकर जो कर्त्तव्य हो सो कीजिएगा। आप लोग धर्म के अनुसार अवश्य ही एक दिन मुझे छोड़ देंगे। इसलिए जब मेरा त्याग निश्चित है तब केवल मुझे त्यागकर आप सबकी रक्षा क्यों नहीं करते? लोग निस्तार पाने की आशा से ही सन्तान की इच्छा करते हैं। अतएव कन्यारूपिणी नौका की सहायता से आप इस विपत्ति-सागर के पार पहुँच जाइए। पुत्र से इस लोक और परलोक, दोनों लोकों में उद्धार होता है। इसी से पण्डित लोग उसे पुत्र कहते हैं। पितर लोग नाती से अपने उद्धार की आशा किया करते हैं; किन्तु मैं आप ही पिता के प्राणों की रक्षा करके उनका उद्धार करूँगी। पिताजी, यदि आप अपनी रक्षा न करेंगे तो मेरा यह नन्हा सा भाई अवश्य ही काल का कौर हो जायगा। तब मेरे इस भाई के और आपके न रहने से पितरों को पिण्ड पहुँचाने-वाला कोई न रह जायगा। उससे अत्यन्त अमङ्गल होगा। और, तब, मैं भी पिता, माता और भाई को न देखकर बहुत ही दुःख भोगूँगी। तब दुःख पर दुःख भोगकर मैं अकाल में ही इस लोक से चल बसूँगी; किन्तु जो आप स्थिर बुद्धि से धैर्य के साथ विचार करके इस विपत्ति से अपना उद्धार कर सकेंगे तो माता, बालक पुत्र, वंश और पिण्ड, सबकी रक्षा होगी। पिताजी, पुत्र अपने तुल्य होता है और पत्नी सखी के समान होती है; किन्तु कन्या कष्ट के समान होती है। इस कारण उस कष्टरूपिणी कन्या को त्यागकर अपने जीवन की रक्षा कीजिए। मुझे अपने धर्म का पालन करने की आज्ञा दीजिए। तात, मैं बालिका हूँ। आप प्राण दे देंगे तो मुझे हर एक के द्वार पर जाना पड़ेगा। अतएव मैं इस निठुर कठिन काम को करके कुल की रक्षा करूँगी। उसके कारण मुझे अनेक लाभ होंगे। आप यदि मुझे यहीं छोड़कर उस राक्षस के पास जायँगे तो मुझे बड़ी यन्त्रणा भोगनी पड़ेगी। इसलिए मेरी प्रार्थना स्वीकार करके मुझ पर कृपा कीजिए। हे साधु-श्रेष्ठ, मेरे और धर्म तथा कुल की रक्षा के अनुरोध से आप अपनी रक्षा कीजिए। मुझे तो आप एक समय अवश्य ही दे डालेंगे। तब न त्याग किया अभी सही। निश्चित रूप से जो काम करना ही है उसमें देर करने की क्या

आवश्यकता है? आप जान दे देंगे तो हम लोग कुत्तों की तरह औरों के द्वार पर भीख माँगते फिरेंगे। पिताजी, इससे बढ़कर दुःख और क्या हो सकता है? आप इस क्लेश से छुटकारा पाकर यदि भाई-बन्धुओं के साथ सुख से जीवन बितावेंगे तो मैं स्वर्ग में सुख से रह सकूँगी। मैंने सुन भी रक्खा है कि ऐसी विपत्ति की दशा में अन्याय करके, और कन्या देकर, लोग यदि अपने को श्राद्ध-तर्पण करने के लिए बचा लेते हैं तो पितर उन पर प्रसन्न होते हैं—उनका हित करते हैं।

कन्या के ये वचन सुनकर पिता और माता दोनों और भी रोने लगे। कन्या भी उनके साथ रोने लगी। अन्त को वह बालक उन्हें रोते देखकर प्रसन्नमुख होकर मधुर तोतली वाणी में कहने लगा—माताजी और पिताजी, आप क्यों रोते हैं? बहन, तुम भी शोक न करो।

अब वह बालक हर एक के पास जाकर सान्त्वना देने की चेष्टा करने लगा। इसके बाद एक तिनका उठाकर वह कहने लगा—मैं इस तृण के द्वारा उस मनुष्य-मांसाहारी राक्षस का नाश कर डालूँगा। उस समय बालक के पिता, माता और बहन तीनों यद्यपि अत्यन्त दुःखित थे तथापि बालक के तोतले वचन सुनकर उन्हें बड़ा आनन्द हुआ।

इसके बाद कुन्ती अपने मन के भाव को प्रकट करने का उपयुक्त अवसर उपस्थित देख, उनके पास जाकर, जैसे अमृत छिड़ककर कोई मुर्दे को जिला दे उस तरह, उस ब्राह्मण के परिवार के शरीरों में जान सी डालती हुई यों कहने लगीं।

एक सौ तिरसठ अध्याय

कुन्ती और ब्राह्मण की बातचीत

कुन्ती ने कहा—मैं जानना चाहती हूँ कि आप लोग यों किस कारण दुःख प्रकट कर रहे हैं; मुझसे हो सकेगा तो मैं उसके प्रतिकार की चेष्टा करूँगी।

ब्राह्मण ने कहा—तपस्विनी, तुम्हारा यों कहना साधु मनुष्यों के योग्य ही है; किन्तु मेरे इस दुःख को मनुष्य दूर ही नहीं कर सकता। उसमें ऐसी शक्ति ही नहीं। इस नगर के समीप बक नाम का एक राक्षस रहता है। वह मनुष्याहारी इस नगर पर और इस प्रदेश पर अपना अधिकार रखता है। मनुष्यों के मांस से पुष्ट, महाबली, दुष्टहृदय वह असुरराज इस प्रदेश की औरों से रक्षा करता है। उसके बाहुबल से हमारी रक्षा होती है, इसी कारण अन्य राज्य या अन्य किसी प्राणी से हमें कोई खटका नहीं है। उस राक्षस के भोजन के लिए एक छकड़े भर अन्न, दो भैंसे और जो मनुष्य यह सामग्री लेकर जाता है वह भी हमें नित्य 'कर' के रूप में देना पड़ता है। इस देश में रहनेवाले गृहस्थ बारी-बारी से नित्य उसे यह कर

देते हैं। अनेक वर्षों के बाद इस तरह की सङ्कटरूप 'बारी' हर एक गृह
यदि कभी कोई गृहस्थ इस सङ्कट से बचने की चेष्टा करता है तो वह राक्ष
परिवार-सहित मारकर खा जाता है। वेत्रकीयगृह नाम के स्थान में इस प्रदेश का एक राजा है। वह बुद्धिहीन और नीतिभ्रष्ट है। यह सच है कि वह स्वयं राक्षसों को मारने में असमर्थ है किन्तु जिसमें सदा के लिए प्रजा का मङ्गल हो—यह विपत्ति मिट जाय—इसका कोई उपाय ढूँढ़ निकालने की भी वह चेष्टा नहीं करता। इसी से हम लोग सदा चिन्तित और उद्विग्न रहते हैं। जब हम उसके राज्य में बसते हैं तब हमें इस दुःख का



सामना करना ही पड़ेगा। ब्राह्मण किसी की बात नहीं सुनते और न कि
सार चलते हैं। वे तो मनमानी जगह उड़नेवाले पक्षी की तरह अपने गुण
हैं वहाँ रहते हैं। शास्त्रों में कहा गया है कि पहले राजा का आश्रय लेन
ब्याह करना चाहिए और तब धन-सञ्चय करना चाहिए। इन तीनों बातें
जाति और पुत्रों की रक्षा की जा सकती है; किन्तु इन तीनों का संग्रह मैं
है। इसी कारण इस समय विपत्ति के समुद्र में मग्न होकर दारुण दुःख
हूँ। आज वही कुलक्षय करनेवाली हमारी बारी है। उसी राक्षस के
हमारे यहाँ से एक मनुष्य जाना चाहिए। मेरे पास इतना धन नहीं है
मोल ले आऊँ और उसे राक्षस के अर्पण करूँ। और, अपने परिवार के
दे नहीं सकता। इस कारण आज उस राक्षस के हाथ से छुटकारा पा
मुझे नहीं देख पड़ता। इसी से इस दुस्तर शोकसागर में पड़ा हुआ मैं गो
निश्चय कर लिया है कि आज मैं स्त्री, पुत्र और कन्या के साथ उस नीच रा
बस, वह हम सबको एक साथ खा जायगा।

एक सौ चौंसठ अध्याय

कुन्ती का राक्षस को मारने के लिए भीमसेन से अनुरोध करना

कुन्ती ने कहा—ब्राह्मण, आप इस डर से किसी तरह का खेद न करें। मैंने उस राक्षस के हाथ से छुटकारा पाने का एक उपाय सोच लिया है। आपके केवल एक पुत्र और एक कन्या है। वे दोनों अभी बच्चे हैं। इसलिए मैं नहीं चाहती कि आपकी पत्नी या आप स्वयं उस राक्षस के पास जायँ। मेरे पाँच पुत्र हैं, इसलिए उनमें से कोई एक आहार की सामग्री लेकर उस पापी के पास जायगा।

ब्राह्मण ने कहा—मैं अपने प्राणों की रक्षा के लिए कभी ऐसा काम नहीं कर सकता। अधर्मी या नीच जाति का मनुष्य भी अपने लिए अतिथि या ब्राह्मण के प्राणों का नाश नहीं करा सकता। तुम निस्सन्देह कोई कुलीन घर की धर्म में निष्ठा रखनेवाली स्त्री हो, जो ब्राह्मण के लिए अपने आत्मा से भी बढ़कर प्यारे पुत्र को राक्षस का आहार बना देना चाहती हो। किन्तु मैं इसे किसी तरह स्वीकार नहीं कर सकता। ब्रह्महत्या और आत्महत्या में आत्महत्या ही ठीक और मेरा कर्त्तव्य है। ब्रह्महत्या करके उसके महापाप से किसी तरह मुझे अपना छुटकारा नहीं देख पड़ता। बिना जाने भी ब्रह्महत्या की जाय तो उससे यों छुटकारा नहीं होता। हे कल्याणरूपिणी, मैं अपने हाथ से अपनी हत्या भी नहीं करना चाहता। दूसरा यदि मेरी हत्या करेगा तो उसमें मुझे पापभागी न होना पड़ेगा; किन्तु यदि जान-बूझकर अपने मतलब के लिए मैं ब्राह्मण की हत्या कराऊँगा तो उस महापातक से, सहज में या कष्ट से, किसी तरह मैं मुक्त नहीं हो सकता। इसके सिवा यह निष्ठुर नीच निन्दनीय कार्य है। पण्डितों का कहना है कि घर में आये हुए और शरणागत को त्यागने और याच्ञा करनेवाले को मारने से बढ़कर निष्ठुर और निन्दनीय काम दूसरा नहीं है। मेरे लिए यह आपत्काल अवश्य है किन्तु आपत्काल के धर्मों को जाननेवाले प्राचीन लोग कह गये हैं कि उस समय में भी कभी निन्दनीय निष्ठुर कार्य न करना चाहिए। इसलिए आज स्त्री-सहित मेरे मरने में ही मेरा मङ्गल है। अपने लिए तुम्हारे पुत्र ब्राह्मण की हत्या का अनुमोदन मैं कभी किसी तरह नहीं कर सकता।

कुन्ती ने कहा—ब्रह्मन्, मैं भी निश्चित रूप से यही जानती हूँ कि सब तरह ब्राह्मण की रक्षा करनी चाहिए। और, सौ होने पर भी माता-पिता के लिए हर एक पुत्र प्रिय होता है; किन्तु आप जिस राक्षस की बात कह रहे हैं वह मेरे पुत्र को मार ही नहीं सकता। मेरा पुत्र पराक्रमी, मन्त्रज्ञ और तेजस्वी है। मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि वह उस राक्षस को सब भोजन की सामग्री दे आवेगा और आप सही-सलामत चला आवेगा। मैंने देखा है कि इससे पहले अनेकों महाबली भीमकाय राक्षस उस वीर से लड़कर मारे गये हैं। ब्राह्मणश्रेष्ठ, आप

यह बात किसी और के आगे प्रकट न कीजिएगा ; क्योंकि आप यह बात
ऋषिकुमार कौतूहल-वश वैसी शक्ति पाने के लिए मेरे पुत्रों को बहुत ही तङ्ग



का कहना है कि गुरु की आज्ञा के बिना मेरे पुत्र जो विद्या दूसरों को देंगे उस विद्या के द्वारा वे फिर आप कुछ न कर सकेंगे। इसलिए वे वह विद्या गुरु की आज्ञा के बिना और किसी को नहीं दे सकते।

कुन्ती के ये वाक्य सुनकर ब्राह्मणी-सहित ब्राह्मण को बड़ा आनन्द हुआ। उसने कुन्ती के अमृत-मधुर वचनों का सादर अभिनन्दन किया। इसके उपरान्त कुन्ती के साथ जाकर उस ब्राह्मण ने और कुन्ती ने भी यह कार्य करने के लिए भीमसेन से अनुरोध किया। भीमसेन ने सुनते ही स्वीकार कर लिया।

एक सौ पैंसठ अध्याय

कुन्ती और युधिष्ठिर का संवाद

वैशम्पायन ने कहा—हे भरतकुलावतंस, भीमसेन ने वह काम करने
युधिष्ठिर आदि अन्य पाण्डव भी भिक्षा माँग करके घर लौटे। भीमसेन के अ
इस वृत्तान्त को जान गये। उन्होंने एकान्त में बैठकर माता से कहा—भ
क्या अपनी इच्छा से यह काम करने के लिए तैयार हुए हैं या आपने उनके

कुन्ती ने कहा—शत्रुदलन भीमसेन मेरी आज्ञा से ही ब्राह्मण को
को विपत्ति से बचाने के लिए यह भारी और कठिन काम करने को उद्यत हु
फिर युधिष्ठिर ने कहा—आपने ऐसा भयानक दुष्कर साहस कैसे किया?
लोग प्रशंसा नहीं करते। आप पराये पुत्र के लिए अपने पुत्र के त्याग व
हैं? पुत्र-त्याग का विचार करके आप लोक विरुद्ध और शास्त्र-विरुद्ध काम

हैं। जिसके बाहु-बल का भरोसा करके हम लोग सुख से निश्चिन्त होकर सोते हैं और नीचों के द्वारा छीने गये अपने राज्य को फिर पाने की आशा करते हैं; जिस असाधारण तेजस्वी के पराक्रम को स्मरण करके दुःख और डर के मारे दुर्योधन और शकुनि को रात के समय नींद नहीं आती; जिस वीर के पराक्रम की सहायता से हमने लाक्षाभवन की आपत्ति से और अन्यान्य छोटी-मोटी, उसी से सम्बन्ध रखनेवाली, विपत्तियों से छुटकारा पाया और पुरोचन मारा गया है; जिसके बल का सहारा पाकर हम समझते हैं कि धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारकर इस रत्नपूर्ण वसुन्धरा को हमने मानों प्राप्त ही कर लिया है; उसे आप क्या समझकर त्यागने को उद्यत हुई हैं? दुःख और डर से चित्त-विकार उपस्थित होने के कारण आपकी बुद्धि नष्ट तो नहीं हो गई है?

यह सुनकर कुन्ती ने कहा—युधिष्ठिर, तुम भीम के लिए चिन्ता न करो। मैं दुर्बुद्धि या मोह के कारण ऐसा काम करने को तैयार नहीं हुई हूँ। पुत्र! देखो, इस ब्राह्मण के घर में हम सुख से रहते हैं। इसने आदर-सत्कार करके हमारे दुःख को बहुत कुछ घटा दिया है। इसके घर में आश्रय पाने के कारण ही धृतराष्ट्र के पुत्र अब तक हमारा पता नहीं पा सके। इसी कारण इस समय इस तरह मैंने उसके उपकार का बदला चुकाना सोचा है। जो किसी के किये उपकार को नहीं भूलता वही सच्चा मनुष्य है। जो कोई जितना उपकार करे उसका उससे अधिक उपकार करना चाहिए। लाक्षाभवन में भीमसेन के असाधारण पराक्रम और हिडिम्ब के वध को देखकर मुझे निश्चय हो गया है कि उसमें दस हज़ार हाथियों के बराबर बल है। इस कारण उस पर मुझे पूरा भरोसा है। तुम चारों भाइयों को लादकर भीमसेन वारणावत से यहाँ गजराज के समान लाया है। उसके समान बली और कोई नहीं है। वह युद्ध में साक्षात् विष्णु को भी परास्त कर सकता है। पैदा होने के कुछ ही दिनों बाद वह मेरी गोद से पहाड़ की चट्टान पर गिर पड़ा था। उसी समय उसका शरीर ऐसा दृढ़ और भारी था कि चट्टान चूर-चूर हो गई। मैंने खूब सोचकर उसके बल का पूरा अनुभव करके उसे ब्राह्मण का यह उपकार करने की आज्ञा दी है। मैंने अज्ञान, लोभ या मोह के वश होकर ऐसा निश्चय नहीं किया। अच्छी तरह सोच-विचार करके मैं यह धर्म का कार्य करने को उद्यत हुई हूँ। युधिष्ठिर, इससे दो प्रयोजन सिद्ध होंगे। हमको ब्राह्मण ने आश्रय दिया है, इस उपकार का बदला चुक जायगा, और धर्म भी होगा। मैं जानती हूँ कि क्षत्रिय चाहे जिस तरह से ब्राह्मण की सहायता करे, उसे अच्छी गति प्राप्त होगी। क्षत्रिय यदि क्षत्रिय की जान बचाता है तो भी उसे इस लोक और परलोक में श्रेष्ठ कीर्ति मिलती है। वैश्य की सहायता करनेवाला क्षत्रिय सब लोगों का मनोरञ्जन करने में समर्थ होता है। जो राजा शरणागत शूद्र को विपत्ति से बचाता है वह भी ऐश्वर्यसम्पन्न, सर्वश्रेष्ठ राजवंश में उत्पन्न होता है। यह सब मुझसे भगवान् व्यासदेव ने कही थी इसलिए मैं उसे भेजती हूँ

एक सौ छाछठ अध्याय

बक राक्षस के साथ भीमसेन का युद्ध

युधिष्ठिर ने कहा—माता, आपने अपनी बुद्धि से विचारकर ब्राह्म किया सो उचित ही है। आपने ब्राह्मण के दुःख से दुःखित होकर यह करना विचारा है, इसलिए भीमसेन अवश्य ही उस मनुष्य-भक्षी राक्षस को किन्तु आप ब्राह्मण से यह कह दीजिएगा कि नगर-निवासी लोग यह कि भीमसेन ने यह काम किया है। उससे कह देना कि वह इस सावधानी से छिपा रक्खे।

महाराज, इसके उपरान्त रात बीतने पर पाण्डुपुत्र भीमसेन आहा स्थान में गये जहाँ वह राक्षस रहता था। वहाँ पहुँचकर महाबली भीम की सामग्री को खाते हुए उस राक्षस को पुकारने लगे। भीमसेन के पुकारने पर उस राक्षस को बड़ा क्रोध आया। वह वेग से दौड़ता हुआ वहाँ आया जहाँ भीमसेन थे। उसका शरीर बहुत बड़ा, आँखें-दाढ़ी-मूँछ और सिर के बाल लाल-लाल, आकार बहुत ही भयानक, मुख कानों तक फटा हुआ और दोनों कान शङ्कु के समान देखने में भयङ्कर थे। उस राक्षस की भौंहें क्रोध के कारण तीन जगह से टेढ़ी हो रही थीं। वह दाँतों से ओठ चबाता हुआ, बड़े वेग से धरती को कँपाता हुआ, दौड़ा। पास पहुँचकर भीमसेन को अपने आहार की सामग्री खाते देख वह क्रोध के मारे आग के समान प्रज्वलित हो उठा। वह आँखें निकालकर भीमसेन से कहने लगा—तू कौन दुर्बुद्धि पुरुष है जो यमराज के यहाँ जाने की इच्छा से मे भेजे गये इस अन्न को आप खा रहा है ?



राजन्, राक्षस के ये वचन सुनकर भी भीमसेन ने अनसुने से कर

आ दोनों हाथ उठाये भीमसेन को मारने के लिए उनकी ओर दौड़ा।
ब भीमसेन उपेक्षा के साथ उसकी ओर देखकर भोजन करते ही रहे।
की मात्रा बहुत ही बढ़ गई। भीम के पीछे पहुँचकर उसने उनकी
ई। उस बली राक्षस के दोनों हाथों की चोट खाकर भी भीम ने
देखा तक नहीं; वे भोजन करते ही रहे। तब राक्षस और भी अधिक
खाड़कर भीमसेन पर वार करने के लिए उनकी ओर झपटा। उस
धीरे-धीरे वह सब आहार की सामग्री खा चुके। फिर जल पीकर
लिए उठ खड़े हुए। उन्होंने राक्षस के चलाये हुए उस वृक्ष को
पकड़ लिया। तब वह बली राक्षस अनेकानेक वृक्ष उखाड़कर फिर
लगा। भीमसेन भी विविध वृक्ष उखाड़कर उनसे उसके प्रहारों को



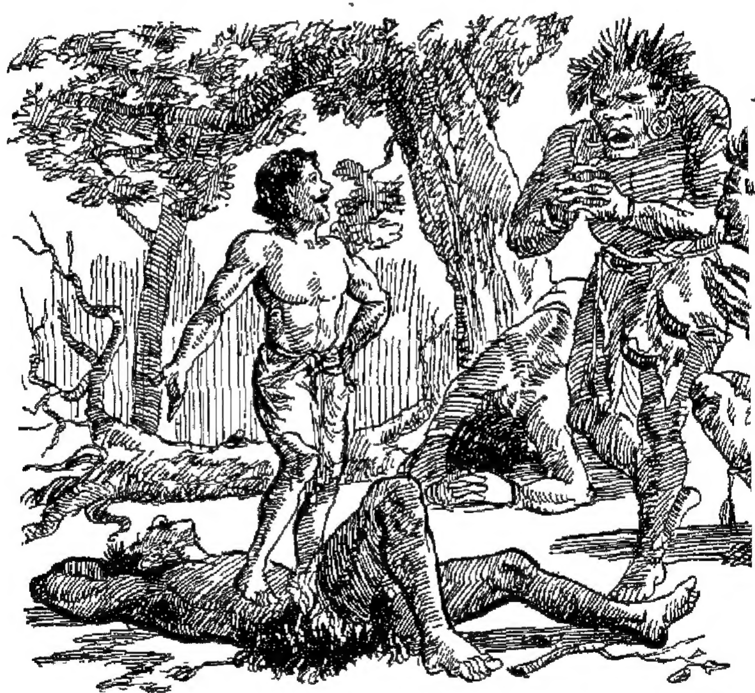
रोककर आप भी उस पर प्रहार करने लगे। महाराज, इस तरह मनुष्य और राक्षस का परस्पर वृक्ष-युद्ध होने से उस वन के अनेकों वृक्षों का नाश हो गया। महाबली बकासुर महाबली पाण्डुपुत्र भीमसेन को अपना नाम सुनाकर उनसे झपटकर घोर युद्ध करने लगा। अब दोनों बली वीर लिपट गये और एक दूसरे को अपनी ओर खींचने लगा। भीमसेन को आप खींचकर और भीमसेन के द्वारा आप खींचा जाकर वह राक्षस थोड़ी देर में थक गया। उन दोनों योद्धाओं के वेग से पृथ्वी काँपने लगी—बड़े-बड़े वृक्ष चूर-चूर होकर पृथ्वी पर गिर

वह मनुष्यहारी राक्षस थक गया है। तब उन्होंने बलपूर्वक उसे पृथ्वी
की कोखों में घुटने मारते हुए वे उसको बलपूर्वक पीसने लगे। अन्त
के बीच में घुटना रखकर दाहने हाथ से उसकी गर्दन और बाँयें हाथ
र बीच से उसके दो टुकड़े कर डाले। उस समय वह राक्षस घोर
सके मुख से रक्त की धारा बह चली

एक सौ सड़सठ अध्याय

बकासुर का वध। उसकी जाति के राक्षसों का वहाँ भागना। नगरवासियों का आनन्दित होना

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, पर्वत ऐसे शरीरवाले बकासुर को
करके मार डाला। वह भयानक चीत्कार करता हुआ मर गया। राजन्,
उस राक्षस के परिवार के लोग अपने अनुचरों-सहित अपने निवास-स्थान से
योद्धा वीरों में श्रेष्ठ भीम ने उन लोगों को डरा हुआ और अचेत सा देखकर



साथ ही उनसे मनुष्य-वध न करने की प्रतिज्ञा करा ली। भीम ने उनसे कह
मनुष्य की हत्या न करना। यदि कभी मनुष्य-हत्या करोगे तो तुम्हारी भी
होगी। राजन्, भीम के ये वाक्य सुनकर उस राक्षस के बन्धु-बान्धव अनुच
वध न करने की प्रतिज्ञा कर ली। तब से वहाँ के राक्षस बहुत सीधे देख

अब भीम ने उस मरे हुए राक्षस की लाश को उठाकर नगर के फा
और आप गुप्त रूप से माता और भाइयों के पास चल दिये। बकासुर के स
वे राक्षस, भीम के हाथों बकासुर की यह गति देखकर डर के मारे इधर-उध

राक्षस को मारकर भीमसेन उसी ब्राह्मण के घर लौट आये। उन्होंने [अपनी माता और] भाइयों से वहाँ का सब वृत्तान्त आदि से अन्त तक कह सुनाया।

दूसरे दिन सवेरे नगरवासियों ने नगर के बाहर निकलकर देखा, उस राक्षस की ख़ून से भीगी हुई पहाड़ के शिखर-सदृश भयानक लाश वहाँ पृथ्वी पर पड़ी है। उसे देखकर उनके रोमाञ्च हो आया। जो लोग नगर के फाटक पर गये थे वे परम प्रसन्न होकर नगर में लौट आये। उन्होंने एकचक्रा नगरी के और लोगों को यह सुसंवाद सुनाया। तब हज़ारों बालक-बूढ़े-जवान नगर-निवासी औरत-मर्द बक राक्षस को देखने के लिए उसी ओर चल पड़े। लोगों का ताँता बँध गया। उस अद्भुत अमानुषी काम को देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। राक्षस के मरने के लिए जिसने जिस देवता की पूजा करने की मानता मान रक्खी थी वह उसे करने लगा। इसके बाद गिनकर सब लोग पता लगाने लगे कि कल किसकी बारी थी। गिनने से उसी ब्राह्मण की बारी मालूम हुई। तब सबने उस ब्राह्मण के पास जाकर इस घटना के बारे में पूछा। लोगों के बहुत पूछने पर उसने पाण्डवों को बचाकर कह दिया कि अपनी बारी जानकर मैं अपने परिवार के साथ बहुत बिलख-बिलखकर रो रहा था। इसी समय एक परोपकारी मन्त्रसिद्ध महात्मा आ गये। उन्होंने मुझसे मेरे रोने का कारण पूछा; मैंने सब हाल उनसे कह दिया। उन्होंने मेरे और इस नगर के सब निवासियों के दुःख को सुनकर हँसकर कहा—मैं ही उस दुष्ट राक्षस के पास उसका आहार ले जाऊँगा; मेरे लिए तुम्हें डरने या चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। इसके बाद आहार की सामग्री लेकर वे बकासुर के पास वन में गये। मुझे निश्चय है कि उन्हीं-ने यह दुष्कर काम करके हम लोगों का हित किया है।

ब्राह्मण आदि चारों वर्णों की प्रजा को उस ब्राह्मण के ये वाक्य सुनकर बड़ा अचरज हुआ। सबने इस ख़ुशी में एक बड़ा भारी ब्रह्मभोज किया। तब से सब लोग नगर के भीतर बड़े सुख से रहने लगे। कुन्ती-सहित पाँचों पाण्डव भी उसी पुरी में ब्राह्मण के यहाँ आनन्द से रहने लगे।

चैत्ररथपर्व

एक सौ अड़सठ अध्याय

उस ब्राह्मण के यहाँ एक दूसरे ब्राह्मण का आना और द्रौपदी के स्वयंवर की चर्चा करना

जनमेजय ने कहा—ब्रह्मन्, पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवों ने बकासुर को मारने के बाद वहाँ रहकर क्या किया, सो मुझे सुनाइए। वैशम्पायन ने कहा—राजन्, वे ब्राह्मण के घर में रहकर उसी

तरह वेद का अध्ययन करने लगे। कुछ समय बीतने पर एक ब्रह्मचर्यव्रत-धारी ब्राह्मण ने उसी ब्राह्मण के यहाँ आकर वहाँ रहने की प्रार्थना की। अतिथि की इच्छा पूरी करने का व्रत रखनेवाले उस ब्राह्मण ने उक्त अभ्यागत ब्राह्मण की यथोचित पूजा की और रहने के लिए स्थान दिया। वहाँ रहकर वह पर्यटन करनेवाला अभ्यागत ब्राह्मण नित्य अनेक देश, तीर्थ, नदी, राजा, राज्य और नगर आदि की बहुत सी अद्भुत बातों का वर्णन किया करता था। जनमेजय, पुरुषश्रेष्ठ पाण्डव कुन्ती के साथ उस ब्राह्मण की सेवा करते और उससे देश-देशान्तर की बातें सुना करते थे। एक दिन उस ब्राह्मण ने बातें करते-करते पाञ्चाल देश में द्रौपदी के अद्भुत स्वयंवर, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी की उत्पत्ति, तथा द्रुपद के महायज्ञ में यज्ञवेदी से द्रौपदी की उत्पत्ति का हाल सुनाया। महात्मा ब्राह्मण के मुँह से संक्षेप में यह विचित्र वृत्तान्त सुनकर नरश्रेष्ठ पाण्डवों ने उससे फिर विस्तार के साथ वर्णन करने के लिए अनुरोध किया। उन्होंने कहा—भगवन्, द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न अग्नि से कैसे उत्पन्न हुए? द्रौपदी भी यज्ञ की वेदी से कैसे उत्पन्न हुई? इनकी अद्भुत उत्पत्ति का हाल आप विस्तार के साथ कहिए। द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने किस तरह महापराक्रमी द्रोणाचार्य से अस्त्रविद्या सीखी? द्रुपद और द्रोण दोनों पहले के मित्र थे; फिर वे पीछे किस कारण परस्पर शत्रुता करने लगे? आप विस्तार के साथ सब कथा कहिए।

वैशम्पायन ने कहा—राजन्, पाण्डवों के इस प्रश्न को सुनकर वह ब्राह्मण द्रौपदी की उत्पत्ति का वृत्तान्त कहने लगा।

एक सौ उनहत्तर अध्याय

द्रोण और द्रुपद के पूर्व-वृत्तान्त का वर्णन

ब्राह्मण ने कहा—हरिद्वार के समीप भरद्वाज नाम के एक महातपस्वी, धर्मात्मा, व्रतधारी, असाधारण तेजस्वी महर्षि रहते थे। वे एक समय गङ्गा-तट पर स्नान करने गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि घृताची नाम की अप्सरा स्नान किये हुए जल से बाहर निकल रही है। किनारे पर आते ही वायु ने उसके कपड़े को शरीर पर से उड़ा दिया। उसे उस दशा में देखने से ऋषि का चित्त चञ्चल हो गया। ब्रह्मचारी ऋषि का चित्त बहुत दिनों के बाद उस अप्सरा पर चलायमान होने से उनका वीर्य स्खलित हो गया। उन्होंने उस वीर्य को द्रोण-कलश में रख दिया। उसी वीर्य से उनके द्रोणाचार्य उत्पन्न हुए। द्रोण ने सब वेदों और वेदाङ्गों को पढ़ा। राजन्, पृषत नाम के एक राजा भरद्वाज ऋषि के मित्र थे। उनके भी इसी समय द्रुपद नाम का एक पुत्र उत्पन्न हुआ। क्षत्रियश्रेष्ठ पृषत के पुत्र द्रुपद भी आश्रम में जाकर द्रोण



द्रोणाचार्य्य के सामने बन्दी के रूप में राजा द्रुपद—पृष्ठ २७२